धन्यवाद ।

इस अमूल्य पुस्तक में धर्मज्ञ सज्जनों ने निम्न प्रकार सहायता दी है । उन्हें कोटिशः धन्यवाद है ।

२१) श्रीमान सेठ सोहनलाल जी जैन ठि० सेठ कन्हैयालाल जी भोलानाथजी जैन टकसाली जौहरी बाजार जैपुर राजपूताना

११) „ , „

११) श्रीमान लाला रामलाल जी श्योलाल जी नं० १ चीनी पट्टी बड़ाबाजार कलकत्ता ।

११) श्रीमान लाला झम्मनलाल जी जैन, कामां (राज्य भरतपुर)

१०) श्री० जैन पञ्चान सुलतानपुर पोस्ट चिलकाना जिला सहारनपुर मार्फत लाला दयानलाल जैन जमींदार ।

५) श्रीमान लाला प्यारेलाल जी कन्हैयालाल जी जैन कुमार बिलडिङ्ग कानपुर ।

५) श्रीमान डाक्टर भाईलाल जी कपूरचन्द जी शाह जैन रजामृत औफिस मु० नार जिला खैरा ।

४॥) श्रीमान जैन पञ्चान मु० गिरीडी जिला हजारीबाग बंगाल मारफत लाला डह्याभाईजी ।

५) श्रीमान लाला जुहारमल जी सहसमलजी मेवाड़ी बाजार ब्यावर राजपूताना ।

३) श्रीमान बाई सांकली बाई जी पुन्य मातुश्री शाह लल्लूभाई जी रायचन्दजी जैन मु० बोराया जिला अहमदाबाद ।

४०) श्रीमती दिगम्बर जैन धर्मप्रभावनी सभा सांभर लेक राजपूताना मा० सभापति द्वारकाप्रसाद जैन ।

५) ब्याज खाते के जमा ।

५१) श्रीमती रतनप्रभादेवी और द्वारेन्द्र देव, सुपत्नी व सपुत्र द्वारकाप्रसाद जैन C h हाथरस ।

१८२॥) जोड़

समाज सेवक—

द्वारकाप्रसाद जैन हाथरस ।

श्रीवीतरागायनमः ॥

श्री परमात्मने नमः श्री ऋषभ—महावीर देवायनम ॥

अहिंसा परमोधर्मः यतो धर्मः ततो जयः ।

धर्मात्माओं के बिना धर्म अन्यत्र कहीं नहीं पाया जा सकता।

भूमिका—उद्देश्य ।

प्रायः ऐसा देखने में आता है कि किसी २ नगर में कुछ जैन जाति के धौवर व बहिरे, पढ़कर व धर्म मार्ग को स्मरण न कर किसी २ बातों में अन्यथा प्रवर्तते हैं जिससे धर्म के आयतनों पर कुछ आक्षेप व विघ्न अवसर हो जाता है और उसके अतिरिक्त शास्त्र भंडारों के दर्शन तक कठिन हो जाते हैं। स्वाध्याय का तो कहना ही क्या? प्रिय सज्जनों! कृपया सोचिए कि हमारे आचार्यों ने कितना परिश्रम और करुणा कर कैसे २ महान ग्रन्थ रचे हैं। और महत पुरुषों ने परिश्रम व लाखों रुपया खर्च कर, परिपाटी चलाते आए हैं। अफसोस! आज हमारे भाई व पंच कहलाकर जैन मंदिरों पर विघ्न व उसके उत्तरोत्तम बाधा डालते हैं और जिन आगमों के दर्शन तक नहीं करते कराते। लेकिन जीर्ण कर अविनय करते हैं या यों कहिए कि सदा के लिए जलांजलि दे रहे हैं। इससे महा अशुभ कर्मों का आश्रव होता है। क्या अमूल्य जैन धर्म व शास्त्र कम नहीं होते हैं? इन सब बातों का कारण सोचा जाय तो यही कह सकते हैं कि ज्ञानदान नहीं, या स्वाध्याय प्रवृत्ति नहीं, या क्या शक्ति अन्तर और विचार नहीं, अथवा प्रमादी बन रहे हैं।

२—द्वितीय हमारे बहुत से अजैन बांधव जैन धर्म या उसके उसूलों को न जानकर, जैन धर्म या जैनियों को किसी २ बातों पर निंदा करते हैं और जैन सम्प्रदाय, उनको जैन धर्म का स्वरूप बताने में प्रमादी हैं अथवा बता नहीं सकते हैं, इन्हीं कारणों से किसी २ स्थान पर हमारे अजैन बांधव, जैनियों के धार्मिक कार्य व उत्सवों पर हर्ष और पुरुष भाव न करते हुए, विघ्न का कारण पैदा कर देते हैं। हमारा अजैन समाज से नम्र निवेदन है कि वे जैनियों से मित्रता कर जैन मंदिर में नित्य जाय और जैन धर्म से लाभ उठावें।

३—इन्हीं अशुभ कारणों को दूर करने के लिए, यह अमूल्य पुस्तक प्रकाशित की है ताकि स्वाध्याय प्रचार और धर्म प्रभावना द्वारा, अन्त में मोक्ष सुख लाभ प्राप्त करें।

द्वारकाप्रसाद जैन C K.

निवेदन ॥

प्रिय बंधुवर्गों! यह अमृतधारा रूपी धर्मोपदेश बड़े परिश्रम से प्रकाश कर आप भाइयों के कर कमलों में भेंट करता हूं। आशा है कि आप धर्मज्ञ शुभ मेरे त्रुटी पर क्षमा भाव रखते हुए जैन अजैन समाज में धर्मोन्नति करेंगे। इस पुस्तक से धर्मोपदेश समय प्रथम सिद्धों, विदेह क्षेत्र के विद्यमान तीर्थंकरों, और तीन लोक के कृत्रिम अकृत्रिम चैत्यालयों को नमस्कार कर, एक णमोकार मंत्र की जाप और निम्न मंत्र की २१ बार जाप देकर व्याख्यान शुरू करने की कृपा करें।

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं कीर्ति मुख मदरे कुरु कुरु स्वाहा ।

२-इसको अविनय करने या रद्दी में डालने से, पापास्रव होगा।
पढ़ने व नित्य सब को सुनाने से, महा मङ्गल होगा॥

३-यदि अविनय व रद्दी का कारण हो, तो किसी जैन मंदिर या अन्य भाई को देदेने की कृपा करें।

४-भारत के प्रत्येक जैन मंदिर में, एक चौकी पर यह पुस्तक हर वक्त विराजमान रहे ताकि दर्शक पढ़ सकें। ऐसे प्रबंध की मैं प्रार्थना करता हूं।

५-भारत के प्रत्येक आश्रमों, वाचनालय, सस्था, पाठशाला, जैन मंदिर इत्यादि २ में यह पुस्तक रक्खी जाने का मैं प्रस्ताव करता हूं।

६-यह प्रत्येक मनुष्य व स्त्रीको विचार रहे कि जो तीनलोक के शिखर पर, सिद्ध भगवान, परमात्मा, ईश्वर, खुदा मौजूद हैं तथा विदेह क्षेत्र में केवली भगवान, उनके ज्ञान में, हमारे सर्व प्रकार के कार्य झलकते हैं। इस लिए हम लोगों को सोच विचार कर शुभ और न्याय पूर्वक कार्य करना उचित है ताकि बुराइयों से बचें। कहावत भी है कि "भाई अकेले में भी यदि कोई साक्षी नहीं है तो ईश्वर, परमात्मा, खुदा, तो साक्षी है वह तो देखता है"

७-जो कोई, किसी विषय पर मुझ से पत्र व्यवहार करना चाहें, तो निम्न पते पर कर सकते हैं।

समाज हितैषी——

द्वारकाप्रसाद जैन, C. K.

पोस्टमास्टर भरतपुर शहर—(राजपूताना)

शुद्ध सूचना पत्र।

(पुस्तक पढने से पहले ठीक कर लेवे)

पत्र नं०	पंक्ति नं०	अशुद्ध	शुद्ध
१	हिंदी ७	फर्मांबरदार	वफादार
६	१०	Fxecutive	Executive
७	५	अशठि	श्रेशठि
८	१२	स	से
१३	२२	इयषह	यह यह
१५	१	संख्यात	सख्यात
२५	७	Structure	Structural
"	"	Enginere	Engineer
२८	१८	कथलज्ञान	केवल ज्ञान
३९	१७	मेंदिर	मँदिर
४०	११	मोलो	भोलों
"	२७	वदनाओ	वेदनाओ
४३	६	स्पश	स्पर्श
४५	२५	अपन	अपने
४८	७	प्रकृत	प्राकृत
"	२९	के	कि
४९	२	स्वरु	सरूप,
"	३	नए सक	नए सकें
"	१७	गुणानवाद	गुणानुवाद
५०	११	नर्मल	निर्मल
"	२८	ओर	और
५१	११	दते	देते
"	"	कामा	कामों
"	१३	ससारी	संसारी
"	१८	ह	है
"	२४	उपक	उनके
"	२६	क	फ
"	"	नम	नग्न
"	२७	दखने	देखने
५२	१८	लगा	लगाये
५३	१०	पर्ण	पूर्ण
५३	११	लगते	लगने
५३	२४	सोम	सीम

पत्र सं०	पंक्ति सं०	अशुद्ध	शुद्ध
५४	२	यथा	यथों
५४	३	दृसकर	देखकर
५८	१६	घडेदा	बड़ोदा
५५	८	अपन	अपने
„	६	धम	धम
„	८—१६	धम	धर्म
„	९	टोक	ठिक
„	१२	भाकराचार्य	भास्कराचार्य
„	१४	का	को
„	१८	अनाद	अनादि
५६	८	मूल्य	मूल्य
५६	८	डाकड	ड क्टर
५६	१६	जोधपर	जोधपुर
६२	१८	ब्राह्मणा	ब्राह्मणों
६४	१५	बाले	बोल
६६	१६	तार्थकरों	तीर्थकरो
६७	४	कहीं	कही
६७	५	का	को
६७	२४	अनतिष्ट	अ तर्निष्ट
७८	१	पुत्रा	पुत्रों
७७	१८	लकडी	कड़ी २ कोंपलें
७९	३०	क	के
८०	२१	आग	अघ
९०	१०	मसाधि	समाधि
९०	२७	सुग	सुर
९१	६	भागवत्न	भगवान की पूजा
९२	१९	समझ का	समझका
९३	४	पगड़ी	पागड़ो
९३	६	पिम्ब	बिम्ब
९३	७	धम	धम
९५	७	स	से
९८	११	डर	डेर
	२२	राजाअ	राजाओं

पृष्ठ नं०	पंक्ति नं०	अशुद्ध	शुद्ध
९५	१	पमाण	प्रमाण
९६	१७	मुफ	मुफे
९८	२६	षमोटको	कर्नाटको
९९	६	नि दन	निवेदन
१०३	३	मु	मुल
१०३	१६		है
१०४		इसम	इस मे
,,	१७	माता	माता पिता
,,	,,	देती	देते
,,	१३	होता है	इत्यादि देते है
,,	२४	चारित्र	चारित्र का कथन है उन
१०५	१	अनक	अनेक
१०६	५	स	म
११२	१	उम	जम
,	१६	कयन	कथन,
,,	२०	अर्जिक	अर्जिका
११६	४	हमारो	हमारे
११८	१०	पुरषो	पुरुषों
११८	१५	पद्वा	पदवी
११८	१६	क, का, दखो	के, को, देखो
१२२	७	नामिनाथ	नमिनाथ
१२२	२१	अहत	अर्हंत
१२९	४	मरमप	नरमेघ
१३२	१८	स्त्रयाँ	स्त्रियाँ
१३२	२१	आत्ता	आत्मा
१३२	२६	शरार	शरीर
१३३	१७	पवम	पवन
१३४	३	वि रीत	विपरीत
१३४	२८	करना	————
१३५	२२	हैं।	हो
१३६	६	हर गज	हरगिज
१३६	१३	मनासिब	मुनासिब
१३६	१७	देशोश्रयय	दशोश्रयय
,,	१८	सयोश्रय	सयोश्रय
,,	२८	पो०	पोमुद्र

विषय-सूची ?

मन को (ॐ) में स्थिर करो।

प्रार्थना ।

नमः श्री वर्द्धमानाय निर्द्धूत कलिलात्मने ।
सालोकाना त्रिलोकाना यद्विद्या दर्पणायते ॥ १ ॥

सिद्धं सपूर्णभव्यार्थं सिद्धेः कारण मुत्तमं ।
प्रशस्त दर्शन ज्ञान चारित्र प्रति पादनं ॥ १ ॥
सुरेन्द्र मुकुटा श्लेष्टपाद पद्म सुकेसर ।
प्रणमामि महावीर लोक त्रितय मंगल ॥ २ ॥

त्रैलोक्य सकल त्रिकाल विषय सालोकमालोकित ;
साक्षाद्येन यथा स्वयं करतले रेखात्रयं साङ्गुलि ।
रागद्वेश भया मयान्तक जरा लोलत्व लोभादयो ,
नाल यत्पद लङ्घनाय स महादेवो मया वन्द्यते ॥ १ ॥

अर्थ—जिस प्रकार अगुलियों सहित हस्ततल की तीन रेखा स्पष्ट देखी जाती हैं , उसी प्रकार जिसने त्रिकाल गोचर अलोक सहित समस्त त्रिलोक को प्रत्यक्षतया स्वयं देखा और राग, द्वेष, भय, रोग, मृत्यु जरा, लोलुपता लोभ आदिक जो १८ दोष हैं, वे जिनके पद को उल्लंघन करने को असमर्थ हैं, उस "महादेव" देवों का देव—अर्हंत वीतराग सर्वज्ञ जिनेन्द्र परमात्मा को" मैं वन्दना (नमस्कार) करता हूँ ।

प्रिय बंधुवर्ग—प्रथम हम अपने इष्टदेव परमात्मा को अञ्जुली पर नमस्कार करते हैं जो हमारे परम मंगल के कर्ता हैं ।

द्वितीय—हम श्रीमान महामान्य सम्राट् पंचम जार्ज (George V Emperor) को हार्दिक धन्यवाद देते हैं कि जिनके राज्य में स्वतन्त्रता पूर्वक धर्म साधन करते हैं

तृतीय—राजा महाराजाओं को जैसे जैपुर, जोधपुर, उदैपुर धौलपुर, ग्वालियर, अलवर, दतिया, पटयाला हैदराबाद दखन, टोंक कोटा, बूंदी, इन्दोर, अलीराजपुर, भावनगर,बड़ोदा बीकानेर बहावलपुर, बस्तर, भोर, बनगनापल्ले, भरतपुर, भोपाल, कोचीन, २ छोटा नागपुर स्टेट, चम्बा, कच्छ, कम्बे, कुर्ग देवास S Br, देवास, JBr दरभंगा, धार, गोंडाल, हिलटिपेरा ईडर, जावरा जम्बू,जैसलमेर, झींद, जओरा, झालरापाटन, खेतरी, कोल्हापर काश्मीर, किशनगढ़, कूचबिहार, कपूरथला, खैरपुर, काठियावाड़, मैसूर, १७ महल उड़ीसा, मनीपुर, मुरसान, नाभा, पन्ना, पालीताना, पुडुक्कोट्टाई, राजगढ़, (ब्यावरा), रीवां, रतलाम, राजपीपला, रामपुर सीकर, साहपुरा, सिरोही सिरमूर, सैलाना, २३ शिमला पहाड़ी रियासतें, सावतवाड़ी संडूर, टावनकोर, टहरी, जो समस्त १०८ बड़े छोटे राज्य हैं अलावे इनके और बहुत से छोटे २ राज्य ठिकाने हैं उन सबको हम अन्तःकरण से धन्यवाद देते हैं । कि जिनके राज्य में न्याय पूर्वक धर्म साधन करते हैं हमारे ऐसे राजा महाराजाओं का शासन अटल रहे । प्रकट हो कि ऐसी प्रार्थना और भावना हम जैनी लोगों की है और जो धर्म हम लोग साधन करते हैं उसका छठा अंश सम्राट और राजाओं को पहुँचता है यह शास्त्र प्रमाण है ।

श्री दि० जैन धर्म प्रभावनी सभा के पहले अधिवेशन पर जो श्रीमान महोदय वाईसराय गवर्नर जनरल बहादुर को तार व सेन के समय जो पत्र सभाकी तरफसे भेजे गए उनके उत्तर हम यहां पाठकों के जानने के वास्ते प्रकाशित करते हैं ।

द्वारकाप्रसाद जैन
सभापति श्री दि० जैन धर्म प्रभावनी सभा सौंमर लेक

Seal of the Private Secretary's Office	Viceregal Lodge, **DELHI** 7th November 1917

Dear Sir,

I am desired to thank you for your loyal message of the 4th november 1917

Yours Faithfully.

(Sd.) B. L GAULD.

Asst Private Secretary to the Viceroy

To

THE PRESIDENT
Digamber Jain Religion Progressive
Association, SAMBHAR

(हिन्दी अनुवाद)

प्राइवेट सेक्रेटरी के दफ्तर की मुहर	वाईसरेगल लोज देहली।

प्रिय सज्जन ! ७ नम्बर सन् १९१७

मैं आपके राजभक्त तार तारीख ४ नोम्बर १९१७ के लिए धन्यवाद देता हूं।

आपका फर्मांबरदार

(Sd) बी एल, गारड।

असिस्टेन्ट प्राइवेट सेक्रेटरी

'वाइसराय के'

बनाम, दि० जैन धर्म प्रभावनी सभा साँभर।

JOINT WAR COMMITTEE

Of the order of S John's and the Red Cross

SOCIETY

Seal of The st John Ambulance Association	"OUR DAY" (12th December 1917)	MARK OF RED CROSS

PRESIDENT

His Excelley The Viceroy & Governor General of India

Chairman of the General Committee

His Excellency the Commander—In—Chief

President of the Executive Committee,

Her Excellency the Lady Chelmsford, C I

Assistant Secretary Captain L C Stevens R F A

SIMLA TEL No 263

Hon Treasurer W J Lister Alliance Bank of Simla

Honorary Secretary E J Buck Office of OUR DAY" North Bank Simla & Viceroys Camp Delhi (During Cold Weather)

Dear Sir,

877 December29th 1917

I am desired to thank you very much for your Letter of December 12th 1917 Her Excellency Lady Chelmsford is much grieved that your district has bee visited by plague & hopes for a Speedy return of healthy Conditions among You and at the same time desires me, to express to you, her Sincere thanks to the DIGAMBER JAINS for their useful and generous Subscriptions,

I am, Yours truly
(Sd) I C Stevens Captain
Assistant Secretary

To the President Digamber Jain Religion Progressive Association Po Sambhar lake Rajputana.

हिन्दी अनुवाद।

सट जो स और रेडक्रोस सोसाइटी को ओहद बार कमेटी।

"हमारा दिन १२ दिसम्बर सन् १९१७"

सभापति—श्रीमान महोदय वाइसराय और गवरनर जनरलहिंद, चेअरमैन जनरल कमेटी—श्रीमान महोदय कमा डर—इन—चीफ, सभापति ऐक्ज़ेक्यूटिव कमेटी—श्रीमती महोदया लेडी चेम्सफोर्ड सी० आ इ०

असिस्टेंट सेकरटरी—केपटिन एल सी स्टेमिंस आर एफ ए. शिमला टेलीफोन नम्बर २६३

आनररी ट्रेज़रर-डबल्यू—जे—लिटस्टर अलाइंस बैंक शिमला
आनरेरी सेकटरी—ई जे बक। दफतर "हमारे दिन का" नोर्थ बक शिमला और वाइसराय केम्प देहली (सर्दऋतु में)

८७७ दिसम्बर २८। १९१७

प्रिय सज्जन

मैं आपको, आपके पत्र ता० १२ दिसम्बर १९१७ के लिये बहुत धन्यवाद देता हूं, श्रीमती लेडी चमस्फोर्ड को बहुत रंज हुआ कि तुम्हारे ज़िले में प्लेग फैल गई और उम्मेद करती हैं कि यह कष्ट जल्द निवारण हो, और साथ ही "दिगम्बर जैनियों" को उनके मुफीद और फय्याजी चन्दे के बारे में हार्दिक धन्यवाद देती हैं।

आपका दियानतदार
(SD) एल सी स्टेमिं स केपटिन

असिस्टेंट सकेटरी

बनाम सभापति श्रीदिगम्बर जैन धर्म प्रभावनी सभा—सांभरलेक

॥ वंदे वीरम ॥

दिशतु मेऽभिमतानि सरस्वती

अयि माननीया, सुहृदः द्वारिकाप्रसादजी जैन हाथरस सभापति जैन सभा सामरलेक (राजपूताना) अखिल भारतवर्षीय दिगम्बर जैन–महासभाया, पत्र निर्गतितमे महोत्सवे श्रीवीर सम्वत २४४७ चैत्रमासस्य द्वितीय सप्ताहे कानपुर (यू० पी०) नगरे सम्भृताया प्रथम जैन साहित्य प्रदर्शिन्यां यच्छ्रीमद्भिः परोपकारपरायणैः धर्म बुद्धया अनेक प्रकाराणि पुस्तका दीनि समाचार पत्राणि च वितरणाय द्रव्याणि प्रेषितानि, तत्कृते सबहुमान, पुरस्सरमेतत्सम्मान पत्र पत्र भवतां श्रीमता सेवाया समर्प्यते ! कृतेनानेन साहाय्येन सुचिर कृतज्ञता— पाशबद्धाः स्मः ।

हस्ताक्षराणि—

(SD) Champat Rai Jain (SD) दुर्गाप्रसाद

लखनऊ महोत्सवस्य सभापतेः प्रदर्शिन्याः सभापतेः

(SD) रामसरूप (SD) कन्हैयालाल

स्वागत समित्याः सभापतेः प्रदर्शिन्याः मन्त्रिणः

ता० ५—२—१९२२

जैनराजधर्म तथा उसकी प्राचीनता।

जैन धर्मसे क्षत्रिय राजाओं का कितना अधिक सम्बन्ध है यह मैं संक्षेप से प्रगट करता हूं।

जैन धर्म के प्रवर्तक २४ तीर्थंकर १२ चक्रवर्ती, ९ नारायण,९ प्रति नारायण और ९ बलदेव ये त्रेसठि शलाका अर्थात पदवी धारक महान पुरुष प्रत्येक कल्पकाल में होते हैं और ये सब नियमसे वीर क्षत्रिय राजवंश के सर्वोच्च कुल में ही जन्म लेते हैं।

यों तो जैन धर्म को चारों वर्ण से लेकर तिर्यंच तक स्वशक्ति अनुसार धारण कर सकते हैं, किन्तु जैन धर्म ने विशेषता क्षत्रिय वर्ण को ही दी है, क्योंकि" "जो कर्मे शूरा सो धर्मे शूरा,, अर्थात् जिसमे कर्म करने की शक्ति है वही कर्म काट सकता है। और यह गुण क्षत्रियों में प्रधानता से होता है, इसी से जैन शास्त्रोंमें यत्र तत्र वीर क्षत्रियों के ही गुणों का कथन बाहुल्यता से भरा हुआ है, जैन पुराणों को यदि वीर क्षत्रियों का इतिहास कहा जावे तो कोई अयुक्ति नहीं होगी।

भगवान ऋषभदेव प्रथम तीर्थंकर इक्ष्वाकुवंशी ने नाभिराजा माता मरुदेवी के यहां स्थान अयोध्यापुरी में जन्म लिया था इन भगवान को कोई २ ऋषभ अवतार भी कहते हैं, कोई २ बाबा आदम भी कहते हैं इन्हो ने ही प्रथम कर्मभूमि सृष्टि की रचना की है, भगवान ऋषभदेव ने तीनों वर्ण के कर्म बतलाते हुए क्षत्रियों के असि (शस्त्र) कर्म को पहिले स्थान दिया है, शस्त्र कला का प्रचार सब से पहिले जैनियों के घर से हुआ है। जैन शब्द मे ही वीरत्व भाव भरा हुआ है। जैन धर्म को शक्तिधारी आत्मा ही भले प्रकार से धारण कर सकता है।

जैन इतिहास से प्रगट है कि आजतक २४५२ वर्ष पूर्व २४ वें तीर्थंकर भगवान महावीर स्वामी जिनका धर्म चक्र अभी तक चल रहा है बिहार जिले के कुण्डलपुर नगर के नाथवंशी राजा सिद्धार्थ के पुत्र थे, राजा सिद्धार्थ का विवाह सिंधु देश के महाराजा चेटक की बड़ी पुत्री त्रिशला देवी (प्रियकारिणी) से हुआ था, (जिन से महावीर स्वामी का जन्म हुआ ।)

रानी त्रिशलादेवी की बहिन चेलना मगध देश की राजगृही नगरी के राजा श्रेणिक (जिनका नाम भारतीय इतिहास में बिम्बसार लिखा है) को ब्याही गई थी उसी समय में कलिंग देश के यादववंशी राजा जितशत्रु थे जिनको राजा सिद्धार्थ की बहिन यानी महावीर स्वामी की बूआ ब्याही गई थी । इस तरह से उस , उस समय भारतवर्ष के बड़े २ क्षत्रिय राजा महाराजा एक न एक सम्बन्ध से जैन राजकुलों में थे। राजा चन्द्रगुप्त जैनी मौर्यवंशी क्षत्रिय था यह क्षत्रिय उपकारिणी महासभा ने माना है। जैन मित्र ता० ९—१—१८ में

राजस्थान के प्रसिद्ध राज्य कुलों में जैन धर्म" नामक लेख में मेवाड़ राज्य उदयपुर, मारवाड़ राज्य जोधपुर और जैसलमेर राज में जैन धर्म की मान्यता के ऐतिहासिक प्रमाण प्रगट किये हैं। जैन धर्म, राजाओं का ही, धर्म है ऐसे होने इस प्रगट किया है यह समय का परिवर्तन है कि आजकल जैन धर्म के धारी कम दृष्टिगत होते हैं ऋषभदेव भगवान का सम्वत ७६ यह प्रमाण है जिससे जैन धर्म यानी जिन या जैन नाम भगवान ईश्वर के धर्म की प्राचीनता प्रगट होती है हम अपने पाठकों के लाभार्थ सब प्रमाण और उत्तर के यहां प्रकाशित करते हैं (बुद्ध प्रश दि० जैन अङ्क ७ वर्ष १२ पत्र १७ व १८ वैशाख वीर ० २४४ महासभादि के कोटा के अधिवेशन प्रस्ताव सातवें पर प्रमाण)

श्री वीर नि० २४५२

श्री ऋषभ निर्वाण संवत् पर शंकाएं और उनका उत्तर।

(ले० श्रीमान प० विहारीलाल जैन, सी० टी०)
(बुलन्दशहरी अमरोहा)

(दि० जैन [illegible] वर्ष १० वां ज्येष्ठ वीर २४५३ पत्र १८)

विदित हो कि यह लेख गत मास जनवरी के "जैन प्रचारक" में तथा गत १० जनवरी के "जैन प्रदीप" में और गत मार्च मास के "दिगम्बर जैन" में प्रकाशित हुआ था जिसे पढ़कर बहुत से इतिहास प्रेमी, हमारे भाइयों ने अपना हार्दिक हर्ष प्रकट किया और तीन चार महाशयों ने इस सम्वत् के विषय में कुछ शंकायें भी की हैं जिससे ज्ञात होता है कि इस लेख को बहुत से भाइयों ने ध्यान पूर्वक बड़ी रुचि से पढ़ा है और अपनी अपनी योग्य सम्मति देकर मेरे उत्साह को बढ़ाया है और मुझे आभारी बनाया है, जिसका धन्यवाद देने के लिए मेरे पास यथोचित शब्द नहीं है।

कई भाइयों ने जो कुछ शंकाएं प्रकट की हैं उनका सारांश निम्न लिखित दो भागों में विभक्त हो सकता है :—

(१) इतने बड़े [illegible] अङ्क के महान सम्वत् को किस प्रकार जाना जावे और कि इकाई दहाई आदि इस अङ्क तक कुल २९ ही अङ्क प्रमाण नियत है?

(२) किस जैन ग्रंथ के आधार पर और किस प्रकार यह सम्वत् निकाला गया है?

उपरोक्त शंकाओं में से पहली शंका प्रकट करते हुए

हमारे कुछ आर्य समाजी भ्राताओं में तथा कई अन्य अंग्रेजी
विद्वानों ने तो अपार पूर्ण गणितज्ञ होने का यहां तक परिचय दिया
है कि दस शंख से आगे गिनती का होना ही असम्भव बतला
बैठे हैं ॥

इस लिए पूर्ण विद्वान सर्व विद्यानिधान सर्वत्र तुल्य महाशयों से
नम्रता पूर्वक निवेदन है कि व गम्भीर दृष्टि से अपने हृदय में विचारें
कि क्या गणना की भी कोई हद हो सकती है? इस प्रकार विचार
दृष्टि से काम लें, पर भले प्रकार ज्ञात होगा कि गणना की कोई
हद या सीमा नहीं होसकती तो भी हम संसारी मनुष्यों को अपनी २
आवश्यकतानुकूल कुछ अंकों तक गणना नियत कर लेनी पड़ती है। अ
अपनी २ आवश्यकताओं को ध्यान में रखकर दरदेश के विद्वानों
अपनी अपनी बुद्धि वा विचारानुसार अनेक प्रकार से गणना
कुछ न कुछ स्थानादि मानकर उनकी कल्पित तथा नियत करते
हैं और अपने २ आवश्यकीय सर्व कार्य उसी से निकालते
हैं, उदाहरण के लिए कुछ विद्वानों की कल्पित इकाई दहाई आदि
नीचे लिखी जाती हैं:—

(१) अर्बी फारसी का इकाई दहाई—यकाइ, दहाई,
सैकड़ा हजार, दसहजार, सौहजार। केवल ६ अंक प्रमाण।

(२) लीलावती की इकाई दहाई—एक, दश, शत, सहस्र,
अयुत लक्ष प्रयुत, कोटि, अर्बुद, अब्ज खर्व, निखर्व महापद्म,
शंकु, जलधि अन्त्य, मध्य, परार्ध। १८ अंक प्रमाण।

(३) उर्दू हिन्दी भाषा की इकाई दहाई—इकाई, दहाई,
सैकड़ा, सहस, दश सहस, लक्ष, दश लक्ष, कोटि, दश कोटि, अर्ब,
दस अर्ब खर्व, दश खर्व, नील, दश नील, पद्म, दश पद्म, शंख,
दश शंख। १९ अंक प्रमाण।

(४) श्री महावीराचार्य कृत गणित-सार संग्रह की इकाई दहाई—एक दश, शत, सहस्र, दश सहस्र, लक्ष, दश लक्ष, कोटि, दश कोटि, शत कोटि, अर्बुद, न्यर्बुद, खर्व, महा खर्व, पद्म, महा पद्म, क्षोणी, महा क्षोणी, शंख, महा शंख, क्षिति, महा क्षिति, क्षोभ, महा क्षोभ। २४ अंक प्रमाण।

(५) अंग्रेजी भाषा की इकाई दहाई—इकाई, दहाई, सैकड़ा, हजार, दश हजार, सौ हजार, मिलियन, दश मिलियन, सौ मिलियन, हजार मिलियन, दश हजार मिलियन, सौ हजार मिलियन, बिलियन, दश बिलियन, सौ बिलियन, हजार बिलियन, दश हजार बिलियन, सौ हजार बिलियन, ट्रिलियन, दश ट्रिलियन, सौ ट्रिलियन, हजार ट्रिलियन, दश हजार ट्रिलियन, सौ हजार ट्रिलियन। २४ अंक प्रमाण। यह इकाई दहाई ऐसे ढंगसे नियत की गई है कि क्वाड्रिलियन आदि शब्दों द्वारा छह २ अंक उपरोक्त रीति से बढ़ा कर २४ अंक प्रमाण से आगे भी अधिक अंक प्रमाण बड़ी सुगमता से की जा सकती है।

उपरोक्त उदाहरणों के अतिरिक्त और भी अनेक प्रकार की इकाई दहाई हैं जो अनेक विद्वानों ने अनेक प्रकार से कल्पना की हैं और जो मानव जाति जन समूह की नित्यप्रति के सब व्यवहारिक कार्यों में पड़ने वाली आवश्यकताओं की पूर्ति करने के लिए केवल पर्याप्त (उपयुक्त) ही नहीं किंतु पर्याप्त से भी अधिक है।

यह जैन आचार्य कृत गणित-ग्रन्थ भास्कराचार्य कृत "लीलावती" से २०० वर्ष पहले का है जो अंग्रेजी अनुवाद सहित "मद्रास प्रांत" सरकार की आज्ञानुसार वहीं के गवर्नमेंट (सरकारी) प्रेसालय में प्रकाशित हो चुका है। "लीलावती" में संभवतः अधिकतर इसी का अनुकरण है। आज कल की हिंदी उर्दू में प्रचलित इकाई ... और किसी से न मिलकर अधिकांश में इसी की इकाई ... मिलती है।

जैनसिद्धान्त में चूंकि तीनलोक का स्वरूप तथा उस में रहने वाले षट्द्रव्य का वर्णन इतना अधिक विस्तार पूर्वक है कि जिसका ज्ञान म मूल भी इस पृथ्वी तलपर अन्यत्र कहीं नहीं पाया जाता इसी लिए इसी सिद्धान्त का गणित भाग भी और भागों की समान बहुत ही उच्च कोटि का है।

गणित विद्या के जो अंक गणित रेखा गणित, बीज गणित आदि अनेक भेद हैं उन में से एक अंकगणित के जैन ग्रन्थों में दो मुख्य विभाग हैं पहला लौकिक और दूसरा अलौकिक या लोकोत्तर। इन दो में से पहले के मान, उन्मान, अव मान, गणिमान, प्रतिमान तत्प्रतिमानादि भेद हैं और दूसरे लोकोत्तर के द्रव्यमान, क्षेत्रमान, कालमान और भावमान इस प्रकार ४ भेद हैं। इन चारों भेदों में से पहिले द्रव्य लोकोत्तरमान के अन्तर्गत संख्या लोकोत्तरमान, और उपमालोकोत्तरमान यह दो उपभेद हैं।

इन दोनों म से संख्या लोकोत्तरमान के मूल तीन स्थान अर्थात संख्यात, असंख्यात, और अनंत हैं और विशेष २१ स्थान हैं। तथा इसी संख्या लोकोत्तरमान की, सर्वधारा, समधारा विषमधारा, कृतिधारा, अकृतिधारा, घनधारा, अघनधारा, कृति मात्रिक धारा, अकृति मात्रिक धारा, घन मात्रिक धारा, अघन मात्रिक धारा, द्विरूप वर्गधारा द्विरूप घन धारा और द्विरूप घनाघन धारा यह १४ धारा हैं। दूसरे उपमा लोकोत्तर मान के पल्य, सागर सूच्यंगुल आदि ८ स्थान हैं।

इसी प्रकार क्षेत्र काल और भाव लोकोत्तर मान के अनेक भेद—भेदादि हैं।

इन सबको सविस्तर बयान उदाहरणों आदि सहित जानना हो तो "वृहत् धारा परिक्रमा" और "महावीर गणित सार संग्रह" आदि जैन गणित ग्रन्थों में तथा श्री त्रिलोकसार और श्री गोमट्टसारादि जैन ग्रन्थों के गणित भाग में देखें। यहां केवल इतना बताना ही अभीष्ट है कि इतना बड़ा ७६ अंक प्रमाण संख्या वाला सम्वत् किस प्रकार पढ़ा जा सकता है? इस के पढ़ने के लिए कौन सी इकाई दहाई है?

ऊपर बताया जा चुका है कि "लौकिक गणित मान" के ६ भेदों में एक चौथा भेद "गणित-मान" है। इसके अन्तर्गत जो इकाई दहाई है वह उपरोक्त प्रकार २४ अंक प्रमाण है।

लौकिक कार्यों में इससे अधिक तो क्या इतने अंकों तक की भी आवश्यकता किसी को नहीं पड़ती। परन्तु "लोकोत्तर गणित" भाग में अनन्त अंकों की आवश्यकता पड़ती है। जिस के लिए जैनाचार्यों ने उपरोक्त प्रकार संख्या लोकोत्तर मान में जघन्य संख्यात आदि उत्कृष्ट अनन्तानन्त पर्यन्त २१ भेदों और सर्वधारा आदि १४ धाराओं में तथा उपमा लोकोत्तरमान में पल्य सागरादि द्वारा बड़े विस्तार के साथ आवश्यकतानुसार सब ही कुछ समझा दिया है। इसमें से "संख्या लोकोत्तरमान" के अन्तर्गत निम्न लिखित इकाई दहाई है जिसकी सहायता से यदि आवश्यकता पड़े तो हम ७६ अंक तो क्या सैकड़ों सहस्रों अंकों तक की संख्या को बड़ी सुगमता से पढ़ सकते हैं। वह यह है—

एक दश शत, सहस दश सहस, लक्ष, दश लक्ष, कोटि, दश कोटि, अर्बुद, दश अर्बुद, खर्व दश खर्व, नील, दश नील, पद्म, दश पद्म शंख, दश शंख, महाशंख यह २० अंक, प्रमाण गिन्ती है। इस से आगे *एकट्ठी, दश एकट्ठी, शत एकट्ठी, सहस्र एकट्ठी, दश सहस एकट्ठी, आदि महा शंख एकट्ठी तक २० अंक प्रमाण ४० अंक तक एकट्ठी के स्थान हैं। इसी प्रकार एकट्ठी के स्थानों की तरह पल्य, सागर और कल्प के बीस बीस स्थान हैं जिस से महाशंख कल्प तक एक एक अंक अनुक्रम से बढ़कर १०० अंक प्रमाण संख्या हो जाती है। कल्प से आगे दुकट्ठी, त्रिकट्ठी, चकट्ठी, पंकट्ठी, छकट्ठी, सकट्ठी, अकट्ठी, नकट्ठी और दकट्ठी में से प्रत्येक के सौ २ स्थान इस प्रकार हैं कि प्रथम के १०० स्थान वाचक शब्दों से आगे एकट्ठी आदि के सदृश दुकट्ठी आदि शब्द लगा दिए जाते हैं। इस प्रकार एक २ स्थान बढ़ती हुई संख्या हजार (१०००) स्थान तक पहुंच जाती है।

नोट—यहाँ इतना ध्यान में रखना आवश्यक है कि संख्या लोकोत्तरमान के जो उपरोक्त मूल तीन और विशेष २१ भेद हैं,

* २ को ६४ जगह रखकर परस्पर गुणा करने से जो १८४४६७४४०७३७०९५५१६१६ संख्या २० अङ्क प्रमाण आती है उस ही एकट्ठी कहते हैं। यह संख्या २० अंक प्रमाण संख्या के जघन्य भेद से अधिक है इसी लिए इकाई दहाई के हिसाब से २१ अंक प्रमाण संख्या का नाम भी "एकट्ठी" माना गया है।

उपरोक्त इकाई दहाई से ७६ अंक प्रमाण और श्री ऋषभ निर्वाण सम्वत् ४१३४५२६३०३०८२०३१, ७७४९५१२ १९९९९, ९९, ९९, ९९९९९९९९९९९९९९९९९९९९९९९९९९,९९९९९९९९९ ९९९९९९९९६०८४१२ है, यह इस प्रकार पढ़ा जा सकता है —

४ पद्म, १३ नील ४५ खरब, २६ अरब, ३० कोटि, ३० लाख, ८२ हजार और ०३१ सागर, ७७४ शंख, ४८ पद्म, ५१ नील, २१ खर्ब २२ अरब, ९९ कोटि, ९९ लाख, ९९ हजार, ९९९ पल्य, ९९९ शंख, ९९ पद्म, ९९ नील, ९९ खर्ब, ९९ अर्ब, ९९ कोड, ९९ लाख, ९९ हजार, और ९९९ पकोटी, ९९९ शंख, ९९ पद्म, ९९ नील, ९९ खर्ब, ९८ अर्ब, ९९ क्रोड़, ९९ लाख, ६० हजार ४१२

अब रही दूसरी शंका कि किस जैन ग्रन्थ के आधार पर और किस प्रकार यह सम्वत् निकाला गया है। इस शंका के विषय में हमारे किसी २ जैन भ्राता ने बड़े आश्चर्यजनक शब्दों में लिखा है कि क्या सागरों के भी वर्ष हो सकते हैं? जैसे सागर के जल की थाह नहीं वैसे ही सागर के वर्षों की गिनती नहीं। सागर के वर्षों की गिनती करना मानो समुद्र को कूजे में भर देना और अज्ञानों को भ्रम में डाल देना है। यदि सागर के वर्षों की गिनती हो सकती तो बड़े २ जैनाचार्यों ने क्यों शास्त्रों में नहीं लिखा तथा एक योजन (दो सहस्र कोश) व्यास का और एक योजन ही गहरा गढ़ा भोगभूमि के सात दिन तक के मेंढे के बालाग्रों से खूब भरकर और सौ सौ वर्ष के अन्तर से एक २ टुकड़ा निकालना बताकर जो एक पल्य के वर्षों की गणना आचार्यों ने बताई है वह इतने चक्कर में डालकर किस लिए कथन को इतना बढ़ाया और अपने समयादि को खोया? बस अंकों में पल्य के वर्षों की गिनती लिख देते इत्यादि.. इसके उत्तर में शास्त्र प्रमाण द्वारा शंका दूर करने से पहिले यह निवेदन

(३) श्री तत्वार्थ सूत्रजीकी अर्थ प्रकाशिका टीका अध्याय ३ सूत्र ३८ की व्याख्या।

(४) श्री तत्वार्थ सूत्रजीकी सर्वार्थसिद्धि भाषाटीका, अध्याय ३; सूत्र ३८ की व्याख्या।

(५) श्रीमान् प० द्यानतरायजीकृत चर्चाशतकका पद्य ३२ और उसकी व्याख्या।

(६) श्री हरिवंश पुराण भाषा टीका का सर्ग ७।

(७) श्री त्रिलोकसारजीकी भाषा टीका श्रीमान् प० टोडरमल जी कृत का गणित भाग इत्यादि देखें।

(२) व्यवहार पल्य के रोमों की संख्या को १०० से गुणा करने से जो संख्या प्राप्त होगी वह एक पल्योपम काल के समयों की संख्या है जिस में उपरोक्त २७ अङ्क और २० शून्य सर्व ४७ अङ्क हैं।

शास्त्र प्रमाण—उपरोक्त ग्रन्थ।

नोट—जिस पल्य अर्थात् खड्डे या गढ़े से उपमा दी जाय उसे पल्योपम कहते हैं। इस लिये जिसे हिंदी भाषा ग्रंथों में बहुधा पल्यकाल बोला जाता है वह वास्तव में पल्योपम काल है। पल्य को यहां गढ़े को का नाम है जिसे कालादि की गणना करने के लिये तीन भेदों अर्थात् व्यवहार पल्य, उद्धार पल्य और अद्धा पल्य में विभाजित किया गया है और जिन में यथा योग्य व्यवहार काल, द्वीप आदि की बड़ी गणनाओं में काम लिया जाता है।

(३) दस कोड़ा कोड़ी (१० करोड़ को करोड़ गुणा अर्थात् एक पद्म) पल्योपम का एक सागरोपम जिसे बहुधा सागर

से उपमा दी गई है) होता है। पल्योपम के उपरोक्त वर्षों की संख्या ×१ दश कोड़ाकोड़ी में गुणा करने से उपरोक्त २७ अङ्क और ३५ शून्य सब ६२ अंक हो जाते हैं जो एक सागरोपम-काल के वर्षों की संख्या है।

शास्त्र प्रमाण—उपरोक्त ग्रन्थ १।

नोट—जहाँ जहाँ यहाँ वहाँ आयु वाले मनुष्य या देव देवी आदि की केवल एक जन्म सम्बन्धी आयु की स्थिति बताई गई है वह सब इसी पल्योपम और सागरोपम में है न कि किसी प्रकार के पल्य या सागर में जो कि वास्तव में कालादि के परिमाण सूचक नहीं है किंतु कालादि की महान गणना जानने के लिए उपमा मात्र सहायक हैं। शास्त्र प्रमाण श्री तत्वार्थसूत्र, अध्याय ३, मूलसूत्र ६, २९, ३८, अध्याय ४ मूलसूत्र २८, २९, ३३, ३०, ४२, अध्याय ८ मूलसूत्र १४, १७ इत्यादि।

इन सूत्रों के टीकाकारोंने पल्य और पल्योपम तथा सागर और सागरोपम के वास्तविक अन्तर पर विशेष ध्यान न देकर पल्योपम के स्थान में पल्य और सागरोपम के स्थान में सागर लिखा है जो एक प्रकार की अशुद्धि है।

(४) एक कल्पकाल २० कोड़ा कोड़ी सागरोपम का होता है जिस के एक भाग अवसर्पणी का चतुर्थकाल जिस में वर्तमान चौबीसी हुई ४२ सहस्र वर्ष कम एक कोड़ाकोड़ी सागरोपम का है। इसी लिए एक सागरोपम के वर्षों की उपरोक्त संख्या को एक कोड़ा कोड़ी में गुणा करने से उपरोक्त २७ अङ्क और ४९ कुल ७६ अंक प्रमाण संख्या एक कोड़ा कोड़ी सागरोपम

के वर्ष को प्राप्ति हो जाता है। इस संख्या में से ३ वर्ष साढ़े आठ मास घटा देने से जो संख्या प्राप्त होगी वह पूर्ण चतुर्थ काल के वर्षों की संख्या है जो ७६ अंक प्रमाण है।

(५) श्री ऋषभ देव जी महाराज का निर्वाण चतुर्थ काल के आरम्भ से ३ वर्ष साढ़े आठ मास पूर्व हुआ और श्री महावीर जी का निर्वाण पंचम काल के आरम्भ से इतने ही काल अर्थात् ३ वर्ष, ८॥ मास पूर्व हुआ। इस लिये प्रथम तीर्थंकर के निर्वाण काल से अंतिम तीर्थंकर के निर्वाण काल तक का अंतर ठीक उतना ही है जितना पूर्ण चौथा काल।

प्रमाण — श्री पद्म पुराण पर्व २० जहां चौथे काल का वर्णन करते हुए २४ तीर्थंकरों के अंतराल कालका कथन पूर्ण किया है तथा हरिवंशपुराण सर्ग ६० श्लोक ५४८, ५४९, जहां २४ तीर्थंकरों के अंतराल कालादि का कथन पूर्ण करके श्री महावीर स्वामी के ११ गणधरों की आयु का कथन है उस से आगे।

(६) अब यदि प्रथम तीर्थंकर के निर्वाण से अंतिम के निर्वाण तक के अंतराल काल अर्थात् पूर्ण चतुर्थ काल के वर्षों की संख्या में श्री वीर नि० सम्वत् जोड़ दें तो हमारा अभीष्ट श्री ऋषभ निर्वाण सम्वत् प्राप्त हो जायगा जिस के वर्षों की संख्या वही है जो कई जैन समाचार पत्रों में प्रकाशित हो चुकी है।

नोट—शिष्ट महाशयों को यह भी जानना अभीष्ट हो कि इतने अधिक बड़े पल्य प्रमाण भोगभूमि के ७ दिन तक के उत्पन्न हुए बालक के बहुत ही छोटे छोटे रोमों या बालाग्रों की उपरोक्त संख्या ४५ अंक प्रमाण किस प्रकार निकाली गई है वह पुरातन ग्रंथों के इसी विषय सम्बंधी कथन को ध्यान पूर्वक पढ़ें।

श्री त्रयप्रकाशिका तथा श्री गोमट्टसारादि में सब कुछ मौजूद है। यदि तब भी समझ में न आवे तो मुझ से पत्र व्यवहार करें। तथा किसी प्रकार की शङ्का उपरोक्त लेख में हो तो वह भी प्रगट करें। किसी जैन समाचार पत्र द्वारा अच्छे प्रकार समझाने का प्रयत्न किया जायगा। किमधिकम्।

नोट—इस लेख में यह बताया गया है कि महावीराचार्य जैन गणितसार में केवल १८ अङ्क प्रमाण की गिनती है और इस से अधिक की गिनती नहीं इनके ग्रन्थ में आई। परन्तु हमने 'दिगम्बर जैन' वर्ष ११ अङ्क ९ और सम्वत् १९७८ में "अङ्कावली" नामक लेख में ५७ अङ्क प्रमाण की गिनती और नाम प्रगट किये थे जो इस प्रकार है —

एक, दश, शत, सहस्र, दशसहस्र, लक्ष, दशलक्ष, कोटि, दशकोटि, अर्बुद, दश अर्बुद, खर्व, दशखर्व, निखर्व, दशनिखर्व, सरोज, दशसरोज, पद्म, दशपद्म, पारा, महापारा, शंख, दश शंख, रत्न, दशरत्न, खण्ड, दशखण्ड, सुघट, दशसुघट, ग्राम, दशग्राम, मसूद, दशमसूद, हार, दशहार, मन, दशमन, वज्र, दश वज्र, लोक, दशलोक, सलोक, दशसलोक, अशोगी, दशअशोगी, मौली, दशमौली, पार, दशपार, कर्णी, दशकर्णी, चौर, दशचौर, पर्णी, दश पर्णी, घटी, दशघटी।

यह गिनती के नाम हमने एक हस्तलिखित प्राचीन पुस्तक से प्रगट किए थे। इस प्रकार इस से ज्यादे की गिनती के नाम भी शायद किसी और प्राचीन ग्रन्थ में मिल जाना सम्भव है जिस से कि यह लोकप्रसिद्ध गिनती सम्बत के ५६ अङ्क सुगमता से गिने जा सकें।

सम्पादक॥

यह रिपभ सवत्त अंग्रेजी में इस प्रकार पढा जाता है।

4134526303082031777495121919999999999999999999999999999999999999990452

卐

(लेखक—खुन्नीलाल जैन)
(By Khunni Lal Jain)

B Sc (ENG) F C L (FIR)
Mechanical Electrical Structure Engineere
HATHRAS Dt ALIGARH U P

Shri Rishabh Jain Year.

Four thousand one hundred and thirtyfour dodecallion, Five hundred twentysix thousand, three hundred and three monodecallion, eightytwo thousand and thirtyone decallion, seven hundred seventyseven thousand, four hundred and ninetyfive nonellion, one hundred twentyone thousand, nine hundred and nineteen octallion, nine hundred ninetynine thousand, nine hundred and ninetynine heptallion, nine hundred ninetynine thousand, nine hundred and ninetynine hexallion, nine hundred ninetynine thousand, nine hundred and ninetynine pentallion, nine hundred ninetynine thousand, nine hundred and ninetynine quadrillion, nine hundred ninetynine thousand nine hundred and ninetynine trillion, nine hundred

ninetynine thousand nine hundred and ninetynine billion, nine hundred ninetynine thousand, nine hundred and ninetynine million, nine hundred sixty thousand four hundred and fifty two

(Shri Mahavir Jain Year, Two thousand four hundred and fiftytwo)
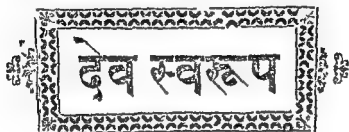
॥ मंगलाचरणम् ॥

वंदों वानी भगवती, विमल जोत जग मांहि ।
भ्रम ताप जासों मिटै, भवि सरोज विकसाहि ॥
गौतम गुरु के पद कमल, हृदय सरोवर आन ।
नमो नमो नित भावसों, करि अष्टांग विधान ॥

प्रिय सज्जनों व बहिनो ! आज इस बात के जानने की अति आवश्यकता है कि हमारे देव गुरु कौन हैं और उनका धर्मोपदेश क्या है ? इस हेतु जो वचन जैसे महान पर्वत में राई समान जिन आगमों व विद्वानों द्वारा मैंने श्रवण किया है उसका अति संक्षेप कुछ यहां प्रगट करता हूं । आशा है कि मेरी त्रुटियों पर क्षमारूपी

धार रखते हुए गुण ग्रहण करते जैसे हँस मिश्रित दूध—जलमें से दूध को पीलता है और जल को छोड़ देता है।

हम को नित्य षट कर्म करना चाहिए। यानी (१) देव पूजा (२) गुरु स्मरन (३) स्वाध्याय (४) संयम (५) तप और (६) दान। इन का पूरा २ वर्णन जिन आगमो से मालूम करना चाहिए। कुछ संक्षेप से आगे लिखता हूं।

यह जीव अनादि काल से संसार के दुखों से कष्ट उठा रहा है। और इसके साथ क्रोध मान माया लोभादि कषायों का इस तरह सम्बन्ध हो रहा है जिस तरह कि "तिल में तेल" इस आत्मा के गुणों का प्रकाश करना, निर्जरा और सम्वर द्वारा, यही मुख्य कर्तव्य है। जीव राम एक है जैसे आम शब्द एक है। परंतु इस की किस्में कई कई प्रकार की हैं जैसे बम्बई, मालदई, तोतापरी इत्यादि इसी प्रकार हर जीव की आत्मा भिन्न २ है और शक्ति बराबर है मगर यह शक्ति कर्म अपेक्षा कर पृथक पृथक है। इस लिए पुद्गल गृहण भिन्न २ है। जैसे मनुष्य, देव, तिर्यंच नारकी इत्यादि।

"सम्वर" का अर्थ आश्रव का रोकना यानी कर्मों को न आने देना और "निर्जरा" का अर्थ लगे-हुए कर्मों को दूर करना जैसे एक रत्नमई पटिया कूड़े से दबी हुई है। उस पर कूड़ा न गिरने देना नाम सम्वर है और जो कूड़ा पड़ा हुआ उसको साफ कर देना नाम निर्जरा है।

इसी तरह इस जीव का गुण स्वभाविक केवल ज्ञान है सो सुनिमित्त द्वारा प्रगट हो सकता है। इस जीव का शुद्ध मोक्ष है कर्मो वश संसार में भ्रमण कर रहा है। इस आत्मा की तीन अवस्था होती है, यानी वहिरात्म, अन्तरात्म और परमात्म।

जिसकी आत्मा पर द्रव्य में ममत्व करती है जैसे यह मेरा यह तेरा इत्यादि, यानी अज्ञान अवस्था उसको वहिरात्म कहते हैं। जब जीव इस अवस्था को छोड़ ज्ञानरस पीता हुआ निजानंद रस में आता है तब इस की हालत संसारियों के निकट आश्चर्य जनक

हो जाता है और संसारी विमुख प्रिय न हो सकती है। यद्यपि कि गृहस्थ अवस्था को त्याग देता है और अपनी आत्मा में लीन हो जाता है। योगी—

"ऐसा की निस्पृह शान्त पाणिपात्रो दिगम्बरः ।
कदाह सम्भविष्यामि कर्मनिर्मूलनक्षमः ॥"

इस पवित्र इच्छा को अपने हृदया —कारा में रखते हुए सांसारिक सुखोत्पादक सार्वभौमिक सम्पत्ति को लात मार कर निर्जन वन में पर्वत की कन्दराओं का आश्रय लिया करते हैं और संसार महोदधि का निर्मूल कर स्व शुद्धात्मस्वरूप मोक्ष नगर का मार्ग सरल किया करते हैं।

सो ऐसी अवस्था को अन्तराम या महात्मा कहते हैं। और तपों और ध्यान द्वारा दाव और ध्यान बढ़ता है तो घातिया, मोहनीय, दर्शनावर्णीय, ज्ञानावर्णीय और अन्तराय) कर्मों का क्षय कर केवल ज्ञान उपार्जन कर "परमातम" अवस्था में पहुँच जाता है। यानी ईश्वर परमात्मा, मयद हितोपदेशक वीतराग हो जाता है। जिनकी समय निरक्षरीय वाणी दिव्य ध्वनि चांदनी सी वर्षा करती है, अर्से समय ज्ञान दर्पणवत है। उनके ज्ञान लोक दर्पण वत झलकता है। आयु कर्म (अघातीय कर्म) के पूर्ण होने पर सिद्ध हो जाते हैं यानी तीन लोक के शिखर पर जा विराजते हैं। इस जीव का स्वभाव उर्ध्व गमन है कर्मों से थक कर संसार में भटकता है जब कर्मों का क्षय कर देता है तब इस को रोकने वाला कोई नहीं। आवागमन मिट गया इस लिए पुद्गल रहित हो गए। निरञ्जन निराकार पद ग्रहण हो गया। संसारी जीव इन को सहस्रों नामों से पुकार कर अपना कर्म रूपी मैल धोते हैं। जैसे सुगाई द्वारा सुवर्ण धोया जाता है। उन नामों को मंत्र भी कहते हैं। उस में अचिन्त्य शक्ति है यानी God (गोड) खुदा, परमात्मा, ईश्वर, सर्वज्ञ केवल ज्ञानी, ब्रह्मा, अर्हन, सिद्ध, जिनेंद्र, जिन भगवान, जिन राज, वीतराग, तीर्थंकर, इत्यादि इस तरह यह हमारा हितकारी है। उनका धर्मोपदेश हम

को मोक्ष मार्ग का दर्शाने वाला है। उसका मार्ग हम भी प्राप्त कर सकते हैं। यह मार्ग तीन रत्नों द्वारा यानी सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान और सम्यग्चारित्र अङ्गरेजी में "Right Belief, Right Knowledge and Right Conduct" और उर्दू में "यकीन सादिक, इल्म सादिक और अमल सादिक कहते हैं" प्राप्त हो सकता है। ऐसा ईश्वर देव, देवों का देव महादेव, परमात्मा खुदा गॉड १८ दोष रहित होना चाहिये। वे दोष यह हैं जन्म Birth, जरा Oldage, रोग Disease, मरण Death, क्षुधा Hunger, तृष्णा Thirst, निद्रा Sleep, स्वेद Sweat, अरति Pain, खेद Restlessness, चिंता Anxiety, मोह Delusion, विस्मय Wonder, मद Pride, भय Fear, शोक Sorrow, राग Attachment, द्वेष Repulsion—

भावार्थ, सच्चा ईश्वर वही है, जोः—

न द्वेषी हो न रागी हो, सदानन्द वीतरागी हो।
वह सब विषयों का त्यागी हो, जो ईश्वर हो तो ऐसा हो॥टेक॥
न ख़ुद घट घट में जाता हो, मगर घट घट का ज्ञाता हो।
वह सत् उपदेश दाता हो, जो ईश्वर हो तो ऐसा हो॥
न करता हो न हरता हो, नहीं अवतार धरता हो।
मारता हो न मरता हो, जो ईश्वर हो तो ऐसा हो॥

ज्ञान के नूर[1]* से पुरनूर हो, जिसका नहीं सानी[2]।
सरासर नूर नूरानी, जो ईश्वर हो तो ऐसा हो॥

न क्रोधी हो न कामी हो, न दुश्मन हो न दामी[3] हो॥
वह सारे जगका स्वामी हो, जो ईश्वर हो तो ऐसा हो॥

वह जाते पाक हो, दुनियाँ के झगड़ों से मुबर्रा[4] हो।
आलिमुलगैब[5] हो बेऐब[6] ईश्वर हो तो ऐसा हो॥

दयामय हो शान्ति हो, परम वैराग्यमुद्रा हो।
न जाविर हो न काहिर हो, जो ईश्वर हो तो ऐसा हो॥
निरञ्जन निर्विकारी हो, निजानन्दरसविहारी हो।
सदा कल्याणकारी है, जो ईश्वर हो तो ऐसा हो॥
न जगजंजाल रचता हो, करम फल का न दाता हो।
वह सब बातों का ज्ञाता हो, जो ईश्वर हो तो ऐसा हो॥
वह सच्चिदानन्दरूपी हो, ज्ञानमय शिव सरूपी हो।
आप कल्याणरूपी हो, जो ईश्वर हो तो ऐसा हो॥
जिस ईश्वर के ध्यान सेती, बने ईश्वर कहे न्यामत।
वही ईश्वर हमारा है; जो ईश्वर हो तो ऐसा हो॥

---

* १ प्रकाश। २ बराबर का। ३ सहायक। ४ रहित। ५ सर्वज्ञ, आगे पीछे की छिपी हुई बातों को जानने वाला। ६ जुल्म करने वाला, अन्यायी। ७ क्रोधी, दुष्ट अन्यायी।

परमात्मा कर्मों रहित निर्दोष है हम संसारी कर्मों सहित दोषी हैं हम को ईश्वर की श्रेष्ठ भक्ति और गुणानुवाद करना चाहिए। जिस भवन में उनकी यथावत प्रतिमा विराजमान की जाती है उसको "चैत्यालय" कहते हैं आज कल अधिकतर जिन मंदिर या जैन मंदिर भी कहते हैं। जो भगवान परमात्मा के मार्ग पर चलते हैं उनको जैनी या श्रावक कहते हैं। वेन सर्वज्ञ परमात्मा के धर्मोपदेश वाणी को जिन वाणी, जिनवाणी माता, सरस्वती, शारदा और श्रुत कहते हैं। क्यों कि जैसे माता बुद्धहीन बालक को संसारी मार्ग में मिष्ट वचनों द्वारा प्रबल बुद्धि कर देती है उसी तरह यह जिन वाणी संसारी जीवों को धर्म मार्ग में निपुण कर अक्षय पद दिला देती है। हम बारम्बार ऐसे निर्दोष देव और जिन वाणी को नमस्कार करते हैं। हम को नित्य ऐसे मंदिर में जाकर जिनेंद्र दर्शन भक्ति व पूजा करना चाहिए। पूजा कई प्रकार से की जाती है—

भक्तामर, दर्शन पाठादि से ईश्वर भक्ति का एक नमूना मालुम हो सकता है भक्तजन हृदय भीज कर रोमांच खड़े हो जाते हैं। जैनियों को यह न समझना चाहिए कि जैन धर्म हमारे कुल की दौलत है यह जिनका धर्म जीव मात्र का धर्म है। जिन या जैन से भगवान का अर्थ है कि जिन्हों ने कर्म शत्रुओं को जीत लिया है इस लिए उन धर्म को जैन धर्म कहते हैं। यह जैन धर्म "दिगम्बर" से प्रगट हुआ है यानी जिस गुरु के शिवाय दो वस्त्र हों यानी निर्ग्रन्थ। जैन धर्म पक्ष रहित वीतरागता लिए हुए है। हमको चार रत्न की परीक्षा अवश्य करनी चाहिए क्यों कि हमको हमारे श्रद्धान मुताबिक फल मिलेगा। यथावत श्रद्धान करने वाले को सम्यग्दृष्टी (True believer) कहते हैं।

साचो देव सोई जामें दोष को न लेश कोई।
वही गुरु जाके उर काहू की न चाह है॥
सही धर्म वही जहां करुना प्रधान कही।
ग्रन्थ जहां आदि अन्त एक सो निवाह है॥
यही जग रत्न चार इन को परख यार।
साचे लेहु झूठे डार नर भौ का लाह है॥
मानुष विवेक बिना पशु की समान गिना।
तातें यह ठीक बात पारनी सलाह है॥

और सुनिये—

पंडित भूदरदास जी का षट कर्मोपदेश।

अथ अंधेर आदित्य नित्य स्वाध्याय करिज्जै।
सोमोपम संसार [illegible] ताप करिज्जै॥

पक्ष ग्रहण कर जाते हैं। इस लिए यह कथन यहां पर इतना खुलासा लिखा गया है। हम आशा करते हैं कि पण्डित बुद्धिमान चतुर सज्जन निष्पक्ष न्याय सहित विचार करेंगे। जैन मंदिर में अयोग्य हालतों और कुभावों से जाना मने इस वास्ते किया गया है कि जिन धर्म में मजबूत पर रहने की शक्ति है उसमें अविनय से उसके हानि होने की सम्भावना है।

देखिए श्रीमान वीरचन्द राघव जी गान्धी B A. M R, A S The Jain delegate to the Parliament of Religions, chicago U S A (1893) जैन फिलोसफी में लिखते हैं—(Page 77)

There is a verse of two lines, the meaning of the second being connected with the first & these two lines must be interpreted together So is the Case with this expression the real fact is that the Brahmins who had been at certain epochs in the history of india inimical to the Jains got hold of the second line only which they interpreted to mean "Even if a person is going to be killed by an elephant he ought not to go into the Jain temple" while if the meaning is taken with the first line, it is this:— "when a person has killed an animal, or any living thing or has returned from an immoral house or a vicious place, or if he has drank wine, then he ought not to pollute the Jain temple even if he is followed by an elephant"

जैन मन्दिर में हम को निम्न लिखित ८४ आसातना दोष नहीं लगाना चाहिए हर जैनी भाइयों को यह कण्ठस्थ करलेना चाहिए चैत्यालय (जैन मंदिर) को स्थापना विषय तथा उसका कितना बड़ा भारी महत्व है सो श्री पद्मपुराण (जैन रामायण) पर्व ८२ सप्त ऋषियों का उपदेश जो श्री गुरु के स्वरूप कथन के आगे लिखा है, मालुम करना।

८४ आसादना दोष श्री जिन मंदिर मे नहीं लगाना।

निम्न लिखित ८४ आसादना टालकर समस्त संघ ही और समासका जिन मंदिर तथा जिन मंदिरमें वर्ताव करना योग्य है, विरुद्ध वर्ताव करना पाप बन्धका कारण है:—

१ मन्दिरमे खासी थूंक खकारना नहीं।
२ मल मूत्र वायु उसारना नहीं।
३ वमन करना तथा कुरला करना नहीं।
४ आंख, नाक, कानका मैल निकालना नहीं।
५ पसीना तथा शरीर का मैल डालना नहीं।
६ हाथ पाव के नख तोड़ना काटना नहीं।
७ फोड़ा खुजाना नहीं, घाव पट्टी करना नहीं।
८ हाथ पाव शरीर दबाना नहीं।
९ तैल मर्दन तथा सुगन्ध आदि लगाना नहीं।
१० पाव पसारना तथा गुप्त अङ्गादि दिखाना नहीं।
११ पाव पर पाव धरना तथा ऊंचे आसन बैठना नहीं।
१२ उंगली चटकाना तथा फोकेकी सान चाटना नहीं।
१३ आलस्य तोड़ना, जभाई, छींक लेना नहीं।
१४ भीतके सहारे बैठना तथा खम सहारे बैठना नहीं।
१५ शयन करना तथा बैठे हुये ओंघना नहीं।
१६ स्नान उबटन तेल क्रिया करना नहीं।
१७ गर्मीसे पंखा तथा रूमालसे हवा लेना नहीं।
१८ जाड़ेमे आगसे तापना नहीं।
१९ कपड़ा धोती आदि धोना सुखाना नहीं।
२० अधो अंगमें खाज खुजाना नहीं।

२१ दारा मजन तथा दारोंमें सीक करना नहीं ।
२२ पटा कुर्सी खाट पलग पर बैठना नहीं ।
२३ गद्दी तकिया लगाके बैठना नहीं ।
२४ ऊंचे आसन बैठके शास्त्र बांचना नहीं ।
२५ चमर, छत्र अपने उपर कराना नहीं ।
२६ शस्त्र बांधके कमर बांधके आना नहीं ।
२७ घरसे कोई सवारी पैं बैठके आना नहीं ।
२८ जूता, खड़ाऊ मोजा तथा ऊनके वस्त्र पहनके आना नहीं ।
२९ नङ्गे सिर मंदिरमें बैठना नहीं ।
३० शृंगार विलेपन तिलकादि करना नहीं ।
३१ दर्पण मुख देखना केश तिलक संवारना नहीं ।
३२ डाढी मूछोंपर ताव देना नहीं ।
३३ हजामत तथा केशलोंच करना नहीं ।
३४ पान, तमाखू, बीड़ी वगैरह खाना नहीं ।
३५ लौंग इलायची, नोंग सुपारी आदि खाना नहीं ।
३६ भांग माजूमका नशा कर मंदिरमें आना नहीं ।
३७ फूलोंकी माला कलगी हार पहरके आना नहीं ।
३८ पगड़ी साफा मंदिरमें बैठके बांधना नहीं ।
३९ भोजन पान मंदिरमें करना कराना नहीं ।
४० औषध चूर्ण गोली आदि मंदिरमें खाना नहीं ।
४१ रात्रिको पूजन तथा फलादि चढाना नहीं ।
४२ जलकेल होली मंदिरमें खेलना नहीं ।
४३ व्याह सगाई नेग कारजकी चर्चा करना नहीं ।
४४ सगे सम्बन्धी मित्रादिक से मिलनी भेट लेनी देनी नहीं ।
४५ कुटुम्ब सुश्रूषा मान आदर करना नहीं ।

४६ जुहार मुजरा, बन्दगी, राम राम, करना नहीं।
४७ राजा तथा सेठ किसीका सन्मान करना कराना नहीं।
४८ बिरादरी सम्बन्धी पञ्चायत मन्दिरमें करना नहीं।
४९ लड़ाई झगड़ा विसम्वाद क्लेश करना नहीं।
५० गाली भंड वचन कटुक वचन कहना नहीं।
५१ झूठ गर्हित सावद्य अप्रिय वचन कहना नहीं।
५२ लाठी मुष्टि शस्त्र प्रहार करना नहीं।
५३ हांसी ठठा मसखरी छेड़छाड़ करना नहीं।
५४ रोना विसूरना हिचकी लेना करना नहीं।
५५ स्त्री कथा तथा कामभोगकी वार्त्ता करना नहीं।
५६ चौपड़ शतरंज गंजफा मन्दिरमें खेलना नहीं।
५७ राजादिकके भयसे मन्दिरमें छुपना नहीं।
५८ गृहकार्य लौकिक कार्यकी वार्त्ता करनी नहीं।
५९ धन उपार्जनके व्यापारकी वार्त्ता करनी नहीं।
६० वैद्यक ज्योतिष नाड़ी आदि मन्दिरमें देखना नहीं।
६१ दुष्ट संकल्प विकल्प मन्दिरमें करना नहीं।
६२ पच्चीस प्रकारकी विकथा करनी नहीं।
६३ देन लेन आदि कार्यकी सलाह खाना नहीं।
६४ चमड़ा हाड़ दांत सींग सख कौडी नख लाना नहीं
सीप हड्डीके बटन लगाकर तथा मखमल सर्ज के व
या दुशाला लोई ओढ़कर व फेल्टकेप(टोपी)पहन आना
६५ हरित फलफूल सचित्त वस्तु मन्दिरमें लाना नहीं।
६६ व्यापारका लेन देन किसीसे करना नहीं।
६७ रिश्वत घूस वगैरह लेना देना नहीं।
६८ रत्न रुपया वस्त्रादि कोई चीज मन्दिरमें परखना न

६९ घरका द्रव्य तथा कोई वस्तु मंदिर में रखना नहीं
७० चढ़ा द्रव्य मंदिर के भंडार में रखना नहीं ।
७१ निर्माल्य द्रव्य मंदिर का मोल लेना नहीं ।
७२ कोई चीज का भाग हिस्सा करना नहीं ।
७३ जुवा होड वगैरह मंदिर म करना नहीं ।
७४ वैश्या नाच भंडई रास मंदिर में करना नहीं ।
७५ कसरत तथा नटकला मंदिर में करना नहीं ।
७६ अनबोलते बालक को मंदिर में लाना खिलाना नहीं ।
७७ शुक, मैना, बुलबुल आदि पक्षी पालना नहीं ।
७८ दरजी का व कारखाने का काम करना नहीं ।
७९ गहना आभरण सुनार से मंदिर में गढाना नहीं ।
८० सिवाय दिगम्बर जैन ग्रंथों के और ग्रंथ लिखना लिखाना नहीं ।
८१ विकार उपजाने वाले चित्राम लिखना नहीं ।
८२ पशु, गाय, भैंस, पक्षी, सुवादि बांधना नहीं ।
८३ पापड मगौडी दाल धोना सुखाना नहीं ।
८४ अभिमान सहित, विनय रहित मंदिर में प्रवेश करना नहीं ।

इस संसार में मोह वश पाप किया करते हुए अनादि से भ्रमण कर रहे है। संसार में कितना सुख दुख है सो निम्न प्रकार जानना।

संसार रूपी वृक्ष (मोहरस स्वरूप)

इस 'मोहरस स्वरूप' का परिचय श्री अमितगति ने धर्म परीक्षा ग्रन्थ में इस प्रकार बताया है—

एक भव्य पुरुष ने अवधिज्ञानी जिनमति नामक मुनिमहाराज को नमस्कार कर के विनय सहित पूछा कि हे भगवन् ! इस संसार

४६ जुहार मुजरा, वंदगी, राम राम, करना नहीं।
४७ राजा तथा सेठ किसीका सन्मान करना कराना नहीं।
४८ विरादरी सम्बंधी पंचायत मंदिरमें करना नहीं।
४९ लड़ाई झगड़ा विसम्वाद क्लेश करना नहीं।
५० गाला मद वचन कटुक वचन कहना नहीं।
५१ झूठ गर्हित सावद्य अप्रिय वचन कहना नहीं।
५२ लाठी मुष्टि शस्त्र प्रहार करना नहीं।
५३ हांसी ठठा मसकरी छेड़छाड़ करना नहीं।
५४ रोना विसूरना हिचकी लेना करना नहीं।
५५ स्त्री कथा नृपा कामभोगकी वार्त्ता करना नहीं।
५६ चौपड़ शतरंज गंजफा मंदिरमें खेलना नहीं।
५७ राजादिकके भयसे मंदिरमें छुपना नहीं।
५८ गृहकार्य लौकिक कार्यकी वार्त्ता करनी नहीं।
५९ धन उपार्जनके व्यापारकी वार्त्ता करनी नहीं।
६० वैद्यक ज्योतिष नाड़ी आदि मंदिरमें देखना नहीं।
६१ दुष्ट सङ्कल्प विकल्प मंदिरमें करना नहीं।
६२ पन्चास प्रकारकी विकथा करनी नहीं।
६३ देन लेन आदि कार्यकी सौगन्द खाना नहीं।
६४ चमड़ा हाड़ दांत सींग सङ्ख कौड़ी नख लाना नहीं तथा सीप हड्डीके रतन लगाकर तथा मखमल्ल सर्ज के वस्त्र पहन या दुशाला लोई ओढ़कर व फटकप(टोपी)पहन आना नहीं।
६५ हरित फलफूल सचित वस्तु मंदिरमें लाना नहीं।
६६ उगाहका लेन देन किसीसे करना नहीं।
६७ रिसवत घूस वगैरह लेना देना नहीं।
६८ रत्न रुपया मुहरादि कोई चीज मंदिरमें परखना नहीं।

६९ घरका द्रव्य तथा कोई वस्तु मँदिर में रखना नहीं
७० भद्दा द्रव्य मँदिर के भँडार में रखना नहीं।
७१ निर्माल्य द्रव्य मँदिर का मोल लेना नहीं।
७२ कोई चीज का भाग हिस्सा करना नहीं।
७३ जूवा होड वगैरह मँदिर में करना नहीं।
७४ वैश्या नाच भँडई रास मँदिर में करना नहीं।
७५ कसरत तथा नटकला मँदिर में करना नहीं।
७६ अनबोलते बालक का मँदिर में लाना खिलाना नहीं।
७७ शुक, मैना, बुलबुल आदि पक्षी पालना नहीं।
७८ दरजी का व कलरबाँत का काम करना नहीं।
७९ गहना आभरण सुनार से मँदिर में गढाना नहीं।
८० सिवाय दिगम्बर जैन ग्रथों के और ग्रथ लिखना लिखाना नहीं।
८१ विकार उपजाने वाले चित्राम लिखना नहीं।
८२ पशु, गाय, भैंस, पक्षी, सुवादि बाधना नहीं।
८३ पापड मगौडी दाल धोना सुखाना नहीं।
८४ अभिमान सहित, विनय रहित मँदिर में प्रवेश करना नहीं।

इस संसार में मोह वश पाप किया करते हुए अनादि से भ्रमण कर रहे है। संसार में कितना दुख दुख है सो निम्न प्रकार जानना।

संसार रूपी वृक्ष (मोहरस स्वरूप)

इस 'मोहरस स्वरूप' का परिचय श्री अमितगति कृत धर्म परीक्षा ग्रन्थ में इस प्रकार बताया है—

एक भव्य पुरुष ने अवधिज्ञानी जिनमति नामक मुनिमहाराज को नमस्कार कर के विनय सहित पूछा कि हे भगवन् ! इस असार

संसार में फिरते हुए जीवों को सुख तो कितना है और दुःख कितना है सो कृपा करके मुझे कहिये। यह प्रश्न सुनकर मुनिराजने कहा कि हे भद्र! संसार के सुख दुःख को विभाग कर कहना बड़ा कठिन है तथापि एक दृष्टांत के द्वारा किंचिन्मात्र कहा जाता है, क्योंकि दृष्टांत के बिना अल्पज्ञ जीवों की समझ में नहिं आता सो ध्यान देकर सुन।

अनेक जीवों कर भरे हुए इस संसार रूपी वन के समान एक महावन में दैवयोग से कोई पथिक (रस्तागीर) प्रवेश करता हुआ। सो उस वन में यमराज की समान सूंड को ऊंची किये हुए क्रोधायमान बहुत बड़े भयङ्कर हाथी को अपने सन्मुख आता हुआ देखा। उस हाथी ने उस पथिक को भीलों के मार्ग से अपने आगे कर लिया और उसके आगे आगे भागता हुआ वह पथिक पहिलें नहीं देखा ऐसे एक अंधकूप में गिर पड़ा। जिस प्रकार नरक में नारकी धर्म का अवलम्बन करके रहता है उसी प्रकार यह भयभीत पथिक उस कूप में गिरता गिरता सरस्तंब कहिये सेर की जड़ को अथवा बड़ की जड़ को पकड़ कर लटकता हुआ तिष्ठा। सो हाथी के भय से भयभीत हो नीचे को देखता है तो उस कूप में यमराज के दण्ड के समान पड़ा हुआ बहुत बड़ा एक अजगर देखा। फिर क्या देखा कि उस सरस्तंब की जड़ को एक श्वेत और काला दो मूस निरंतर काट रहे हैं जैसे शुक्लपक्ष और कृष्ण पक्ष मनुष्य की आयु को काटते हैं।

इस के सिवाय उस कूप में चार कषाय के समान बहुत लम्बे २ अति भयानक चलते फिरते चारों दिशाओं में चार सर्प देखे। उसी समय उस हाथी ने कोपित होकर संयम को असंयम की तरह कूप के तटपर खड़े हुए वृक्ष को पकड़कर जोर से हिलादिया सो उसके हिलने से उस पर जो मधुमक्खियों का छत्ता था उसमेंसे समस्त मक्खियें निकल कर दुःसह वेदनाओं के समान उस पथिक के शरीर पर चिपट गई। तब वह पथिक चारों तरफ मर्मभेदी पीड़ा देने वाली उन मधु मक्खियों से घिरा हुआ अतिशय दुःखित हो ऊपरि को देखने लगा। सो वृक्ष की तरफ मुख को उठाकर देखते ही उस के होठों पर बहुत छोटा एक मधुका बिंदु आपड़ा

सो यह मूर्ख उस मक्खी को नाक में भी अधिक त्रास दी कुछ भी दुःख न समझ, उस मधुबिंदु के स्वाद को लेता हुआ अपने को महा सुखी मानने लगा।

इस कारण वह अजान पथिक उन समस्त दुःखों को भूलकर इस मधु करण के स्वाद में ही आसक्त हो फिर मधुबिंदु के पड़ने की अभिलाषा करता हुआ लटकता रहा। सो हे भाई! उस समय पथिक के जितने सुख दुःख हैं उतने ही सुख दुःख मनुष्यों को प्राप्ति रूप इस संसार रूपी वन में इस जीव को हैं।

सो जिनेन्द्र भगवान ने कहा है कि यह वन तो पाप है, वह पथिक है सो जीव है, हाथी है सो मृत्यु (यमराज) के समान है। यह नरककूप है सो भीर को आयु (उमर) है और कुआ है सो संसार है। अजगर है सो नरक है। श्वेत श्याम दो मूषक हैं सो शुक्ल और कृष्ण दो पक्ष हैं, जो उमर को घटा रहे हैं। और चार सर्प हैं सो क्रोध मान माया लोभ ये चार कषाय हैं। तथा मधुमक्खियाँ हैं सो शरीर के रोग हैं। मधु के बिंदु का जो स्वाद है सो इंद्रिय जनित सुख (सुखाभास मात्र) है। इस प्रकार संसार में सुख दुःख का विभाग है। वास्तव में इस संसार में भ्रमण करते हुए जीवों के सुख दुःख का विभाग किया जाय तो मेरुपर्वत की बराबर तो दुःख है और सरसों की बराबर सुख है। इस कारण संसार का त्याग करने में ही निरन्तर उद्यम करना चाहिए।
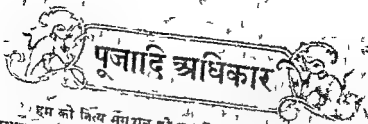
पूजादि अधिकार

हम को नित्य भगवान की पूजादि करना चाहिए। किसी २ स्थान पर किसी निजी कारण में कोई २ भाई या बहिनें हम या अज्ञानता के कारण, किसी किसी भाई या जाति को प्रक्षाल पूजा से मना करते हैं जिस से आपस में द्वेष बुद्धी फैल कर धर्म आयतनों पर आक्षेप होने लगता है सो ऐसे भाइयों से हमारा नम्र निवेदन है कि ऐसी बुद्धि से निरन्तर पाप बंध होता है। और किसी शास्त्र में किसी को निषेध नहीं लिखा है सिवाय अप्रदीक्ष इत्यादि। परन्तु सब ने जिनेन्द्र की पूजा-प्रक्षाल का उत्साह दिया है लेकिन शास्त्रोक्त रीति से होना उचित है पद्य तो सर्वथा कर सकते हैं यहां यह और प्रकाश करते हैं कि "स्त्री समाज" भी पूजा कर सकती है। देखिए पण्डित भूदरदास जी कृत " चरचा समाधान" ग्रन्थ चरचा ८६ पृष्ठ ७० लिखित है:—

(१) सुलोचना पुत्री राजा अकम्पन ने प्रक्षाल पूजा करी (महापुराण)

(२) मैना सुन्दरी ने श्रीपाल के गन्धोदक लगाया। अगर अभिषेक पूजा नहीं की तो शरीर के लिए इतना गन्धोदक कहां से लाई।

(३) अंजना देवी के भवान्तर में कनकोदरी पटरानी थी, कण्ड राजा अरण्यनगर में प्रतिमा की स्थापना कर पूजा करी। एक दिन कनकोदरी ने दूसरी रानी लक्ष्मीमता की प्रतिमा मंदिर से बाहर रक्खी सो संयम श्रीनाम अर्जिका के उपदेश से मंदिर में वापिस ले जाकर पूजा की। उस अविनय से अंजना का इस जन्म में पवन जय पति से वियोग हुआ (देखो पद्मपुराण जैन रामायण में)

(४) वर्तमान में धर्मविश्राम मन्दिर के चैत्यालय में वहां स्त्रियाँ पूजादि करती हैं।

वर्षे भादवा सुदी ५ वृद्ध दिने कुरु जांगल देसे सुलतान सिकन्दर पुत्र सुलतान इब्राहिम राज्य प्रवर्त्तमाने श्री काष्ठासंघ, मथुरान्वये पुष्करगणे भट्टारक श्री गुणभद्र सूरिदेवा वृद्धाम्नाये—जैसवाल चौ० (धुरा) टोडरमल्लु । चौ जगमोपुत्र इद उत्तर पुराण टीका लिखाया । शुभं भवतु । मांगल्य दधाति लेखक पाठकया ॥ इस प्रशस्ति से पाठक यह अनुमान कर सकेंगे कि ४०० वर्ष पूर्व जैसवाल भाई इतने योग्य थे कि वे म कुन आदि पुराण जैसे महत्वशाली ग्रन्थ को लिखाकर पढ़ सकते थे। क्या उनकी तुलना हम लोगों में हो सकती है।
(जैसवाल—जैन पत्र अङ्क ८ कार्तिक शुक्ला २ स० १०७८ वीर स०२४४८ से उधृत)

नोट ३—बाबू मथुरादास और ज्ञानचन्द्र लाहौर कृत जैनतीर्थ यात्रा नम्बर ३७ सन १९०१ पत्र १२३ में लिखा है कि सहारनपुर में ५०० घर सूर्यवंशी क्षत्री अग्रवाल जैनियों के हैं (यह ८ वीं जाति है)

नोट ४—८७ वीं जाति—ब्रह्मचारी शीतलप्रसाद जी कृत जैन यात्रा, जिस को भारत वर्षीय दि० जैन तीर्थ क्षेत्र कमेटी ने सन १९१२ ई० वी० र० २४३८ में प्रकाश किया। पत्रे १४ में वैश्य लामची दास सूर्यवंशी "जैसवाल जैन" लिखा है। इन्होंने संवत १८२६ में निग्र मुनि अवस्था धारण की थी।

नोट ५—इसी प्रकार सब जैन जाति के इतिहासों से मालूम होता पुस्तक बढ़ने के भय से और इतिहास संग्रह नहीं किए।
नोट ६—

* गर्जना *

जाति की सेवा करनी, यह पहला काम अपना ।
सेवा के वास्ते यह जीवन तमाम अपना ॥ टेक ॥
तुम चाहे गालियां दो भर पेट निन्दा करलो ।
छोड़ो जो सेवा करनी, जीवन हराम अपना ॥
जीते जी मर मिटेंगे अच्छी बुरी सहेंगे ।
सेवा मगर करेंगे जब तक है चाम अपना ॥
सेवा का दम भरेंगे, जब तक कि हम जियेंगे ॥ जाति की० ॥

श्री गुरु का स्वरूप

श्री गुरु महा मुनि का स्वरूप अन्तर आत्मापविषे पहिले कुछ कह चुके है, थोडासा और कुछ वर्णन करता हू. वे १४ अंतरग परिग्रह [मिथ्यात्व, वेद (स्त्री पुरुष नपुंसक से अनुराग) राग, द्वेष, हास्य राति अराति शोक भय जुगुप्सा क्रोध मान माया और लोभ] और १० बाह्य परिग्रह [क्षेत्र वास्तु चांदी सोना, धन, धान्य दासी, दास, कुप्य भाण्ड] से रहित होते हैं, २८ मूलगुण (५ महाव्रत, ५ समिति, ५ इंद्रियों का रोकना, ६ आवश्यक, ७ अवशेष) और ८४ लाख उत्तर गुण के धारक होते हैं, उनका तेरह प्रकार यानी ५ महाव्रत (अहिंसा, सत्य, अचौर्य, ब्रह्मचर्य परिग्रहत्याग), ५ समिति (ईर्य्या, भाषा, एषणा, आदान निक्षेपण, प्रतिष्ठापन) और ३ गुप्ति (मन, वचन काय) का चरित्र होता है, इसलिये यह दिगम्बर जैन धर्म तेरा पंथी कर भी पुकारा जाता है, ऐसे गुरु जिनके किसी प्रकार की चाह नहीं उनसे ही हमारा यथार्थ कल्याण हो सक्ता है उनकी स्तुति और गुणानुवाद में महापुण्य का आश्रव होता है, और पापों का नाश होता है हम अज्ञानता से बाजवक्त उनकी निन्दा कर बैठते है यह हमारी महा भूल है सामान्य पुरुषकी निन्दा करना पाप है तो ऐसे महात्मा की निन्दा करना क्या वज्र पाप न होगा । ऐसे महा मुनि के भाव

निर्मल विकार रहित होते हैं जैसे तुरन्त जन्मे बालक के भाव निर्मल होते हैं। वे नग्न मे शरीर रक्षा के लिये जिससे धर्म साधन हो, आहार लेने आते है सो भी ३२ अन्तराय टालकर नवधा भक्ति से भोजन लेते है वरना जंगलों में, नदियों के तटपर, पर्वतों की चोटीयों पर ध्यानारूढ रहते है। वे महामुनि करुणा के सागर आप तिरने वाले दूसरों के तारने वाले होते हैं। उनके भाव सर्वोत्कृष्ट उच्च होते है जैसे कूप का जल एक काच के गिलास में भरकर देखिये तो गदलासा मालूम होगा, यही अवस्था ठीक हम संसारियों की है और जब कुछ देर बाद देखेंगे तब वह गिलास का जल बिलकुल स्वच्छ यानी कुल कर्दम नीचे बैठ जाता है और जल निर्मल होजाता है सो ठीक यही अवस्था महा मुनियों की है। ऐसे निर्ग्रंथ मुनि, सर्वोत्कृष्ट पूज्य हैं। नग्न अवस्था पर निम्न दृष्टान्त द्वारा विचार करिये।

एक समय सरमद नाम का मुसलमान फकीर देहली के गली कूचों में महना (नङ्गा) मादरजाद होकर घूम रहा था। औरंगजेब बादशाह ने भेजा, उन पोशिश के लिए कपड़े भेजे, फकीर मजजून (अपनी ही आत्मा में लीन निजानन्द अवस्था में) और वली था। कह कहा (हँस दिखाकर) हँसा! कलम दवात कागज पास था एक रुबाई [शैर (छन्द)] लिखी और बादशाह के खिलअत को यों ही वापिस कर दिया रुबाई यह थी।

आकस कि तुरा कुलाह सुल्तानी दाद।
मारा हम और अस्बाब परेशानी दाद॥
पोशानीद लबास हरकारा ऐबे दीद।
बे ऐबां रा लबास अयानी दाद॥

अर्थ—जिस ने तुमको बादशाही ताज दीया उसी ने हम को परेशानी का सामान दीया। जिस किसी में कोई ऐब पाया उस को लिबास पहिनाया और जिन में ऐब न पाए उनको नंगेपन का लिबास दिया।

यः लाख रुपये का कलाम है। हमको नग्नेपन पर घृणा या निंदा न करना चाहिए। ज्ञान और तप से उन की आत्मा और इंद्रियां निर्मल और दमन हो गई हैं हम को उनके उच्च आदर्श भावों पर विचार करना चाहिए। चूंकि हमारी आत्मा विकार सहित और कामातुर है इस लिए हम अज्ञानी, उनके शरीर की तरफ बुराई कर लेते हैं जैसे कहावत है कि चोर सबको चोर ही समझता है इत्यादि। सुनिए छोटे बालक लड़के लड़कियां नग्न वस्त्र रहित एक जगह खेलते हैं परन्तु ज्यों २ संसारी कामों का उन पर असर पड़ता जाता है और कामातुर होने की अवस्था नजर आती है कारन उनको कपड़े पहना दिए जाते हैं। तरुण अवस्था में उन्हें एक जगह खेलने भी नहीं देते। जब संसारी कामों में लग कर, ज्ञान प्राप्त होता है तो संसार को हेच समझने लगते हैं और ज्ञान द्वारा संसारी विकारों को निकाल कर हुए गृहस्थ अवस्था को त्याग देते हैं यहां पूर्ण विचार करिए कि जब तक संसारी अवस्था का चस्का न पड़ा था तब तक नंगे रहे और जब चस्का पड़ गया तो कपड़े पहनने लगे। मगर जब संसारी चस्का निकल गया तो फिर कपड़े छोड़ दिए अब कौन सी बुराई की बात रही! यही ज्ञान की बात है हम विकारी कपड़े पहिने हुए, इन्हीं नेत्रों से माता पिता भाई बहिन, स्त्री पात, पुत्र पुत्री, इत्यादि को देखते हैं मगर भावों का विचार रखते हैं। इस लिए यह बात सिद्ध हो गया कि हमको ऐसे देव गुरु का दर्शन सर्वोत्कृष्ट उच्च भावों से करना चाहिए और उनके चर्णों को पूजा कर मनुष्य जीवन सफल करना आवश्यक है। सिद्धान्त यह है कि आत्मा को शारीरिक बन्धन से और तत्कालिक

* परीषहों में आह्लाद करके निर्विकल्प कर दिया जाय ताकि इस का निजरूप ध्यान में आवे, व जाहिरदारी के दस्तूरिवाज से पर

रहते हैं। देव को क्या बात है। वे इदन्न खुदा (यानी निज आत्म में लीन) रहने वाले हैं। यदि हम अपना सा समझें तो क्या हमारी महाभूल नहीं है? जैसा हम भाव व भृकुटी करेंगे वैसा ही हमारे लिए वध है यानी दर्पण में जैसा मुख करो वैसा ही दीखता है। जिस नगर के किनारे पर से जैन मुनि पहुंच जाते हैं दुर्भिक्ष व मरी जाती रहती है उनके चर्णोदक व चरण रज मस्तक पर चढ़ाने से शरीर निरोग और गुणों की खान हो जाता है। हमारा ऐसे जैन जती

को बारम्बार नमस्कार होवे। जहाँ २ ऐसे महान पुरुषों ने तप किया है वही स्थान जग में तीर्थ होगए हैं।

६ अङ्गरेजी में भी कहावत इस प्रकार है :—

"LIVES OF GREAT MEN ALL REMIND US,
WE CAN MAKE OUR LIVES SUBLIME,
AND DEPARTING, LEAVE BEHIND US,
FOOT—PRINTS ON THE SANDS OF TIME

रेखता

चलो देखो दिगम्बर मुनि महानाकट ध्यानस में। खड़े निश्चल हैं वे वन में तपस्या हो तो ऐसी हो॥
ग्रीषम काल कैसा है कुरुण वन में धूप कायर। शिखर पर हैं खड़े निर्भय तपस्या हो तो ऐसी हो॥
ऋतु पावस आती गरजे पड़ है मेघ की धारा। वृक्ष तल पद्म आसन है तपस्या हो तो ऐसी हो॥
यह देखो शीत की सरदी गले हैं मन भी वानर के। लगा है ध्यान सरतापर तपस्या हो तो ऐसी हो॥
दहाड़ सिंह जिस वन में लगा ध्यान शासन में। पड़ी है वालि जिन तन में तपस्या हो तो ऐसी हो॥
शुद्ध उपयोग तलाशन में कर्मको मारे निशदिन। शत्रु और मित्र से समता तपस्या हो तो ऐसी हो॥
मुमुक्ष को है यहाँ पहचान बतलाओ जैन शासन में। झुकाकर सिर करू सिजदा तपस्या हो तो ऐसी हो॥

अब कुछ अजैन विद्वानों की भी सम्मतियां यहां पर प्रकट करते हैं जिसको लाला केसरीमल, मोतीलाल राँका ब्यावर वाले ने फरवरी १९२३ में संग्रह कर ट्रेक्ट द्वारा इस प्रकार प्रकाश किया था।

जैन धर्म की प्राचीनता व उत्तमता के विषय में अजैन सुप्रसिद्ध विद्वानों की सम्मतियें ।

श्रीयुत महामहोपाध्याय डाक्टर सतीशचन्द्र विद्या भूषण एम० ए० पी० एच० डी० एफ० आई० आर० एस० सिद्धान्त महोदधि प्रिंसपिल संस्कृत कालिज कलकत्ता ।

आपने २६ दिसम्बर सन् १९१३ को काशी (बनारस) नगर में जैन धर्म के विषय व्याख्यान दिया उसका सार-रूप कुछ वाक्य उद्धृत करते हैं ।

जैन साधु—एक प्रशंसनीय जीवन व्यतीत करने के द्वारा पूर्ण रीति से व्रत, नियम और इन्द्रिय संयम का पालन करता हुआ जगत के सन्मुख आत्म संयम का एक बड़ा ही उत्तम आदर्श प्रस्तुत करता है। प्राकृत भाषा अपने सम्पूर्ण मधुमय सौन्दर्य को लिए हुए जैनियों की रचना में ही प्रगट की गई है ।

[२]

श्रीयुत महा महोपाध्याय सत्य सम्प्रदाया चार्य सर्वान्तर पंडित स्वामी राममिश्र जी शास्त्री भूत प्रोफेसर संस्कृत कालेज बनारस ।

आपने मि० पौष-शु० १ सं० १९६२ को काशीनगर में व्याख्यान दिया उस में के कुछ वाक्य उद्धृत करते हैं ॥

(१) ज्ञान, वैराग्य, शांति, क्षान्ति, अदम्भ अनीर्ष्या, अक्रोध अमात्सर्य, अलोलुपता, शम, दम, अहिंसा, समदृष्टि इत्यादि गुणों में एक एक गुण ऐसा है कि जहाँ वह पाया जाय वहा पर बुद्धिमान् पूजा करने लगते हैं। तब तो जहा ये (अर्थात् जैनों में) पूर्वोक्त सब गुण निरतिशय सीम होकर विराजमान हैं उनकी पूजा न करना अथवा ऐसे गुण पूजकों की पूजा में बाधा डालना क्या इन्सानियत का कार्य है ?

(२) मैं आपको कहाँ तक कहूँ बड़े बड़े नामी आचार्यों ने ग्रन्थ में यथा शंकराचार्य ने जैन मत खण्डन किया है वह ऐसा किया है जिसे सुन हँसी आती है।

(३) स्याद्वाद का यह (जैन धर्म) अभेद्य किला है उस के अन्दर वादी प्रतिवादियों के मायामय गोले नहीं प्रवेश कर सकते।

(४) सज्जनो एक दिन वह था कि जैन सम्प्रदाय के आचार्यों के हुंकार से दसों दिशाएं गूंज उठती थीं।

(५) जैन मत तब से प्रचलित हुआ है जब से संसार में सृष्टि का आरम्भ हुआ।

(६) मुझे इस में किसी प्रकार का उज्र नहीं है कि जैन दर्शन वेदान्तादि दर्शनों से पूर्व का है।

[१]

भारत गौरव के तिलक पुरुष शिरोमणी इतिहासज्ञ, माननीय पं० बाल गंगाधर तिलक के ३० नवम्बर सन् १९०४ को बड़ौदा नगर में दिये हुए व्याख्यान से उद्धृत कुछ वाक्य।

(१) श्रीमान् महाराज गायकवाड़ (बड़ौदा नरेश) ने पहले दिन कानफरेंस में जिस प्रकार कहा था उसी प्रकार 'अहिंसा परमोधर्म' इस उदार सिद्धान्त ने ब्राह्मण धर्म पर चिरस्मरणीय छाप मारी है। पूर्व काल में यज्ञ के लिए असंख्य पशु हिंसा होती थी इस के प्रमाण मेघदूत काव्य आदि अनेक ग्रन्थों से मिलते हैं——परन्तु इस घोर हिंसा का ब्राह्मण धर्म से विदाई ले जाने का श्रेय (पुण्य) जैन धर्म के हिस्से में है।

(२) ब्राह्मण धर्म को जैन धर्म ही ने अहिंसा धर्म बनाया

(३) ब्राह्मण व हिंदू धर्म में जैन धर्म के ही प्रताप से मांस भक्षण व मदिरा पान बन्द हो गया।

---

*भूत पूर्व सम्पादक केसरी।

(४) ब्राह्मण धर्म पर जो जैन धर्म ने अक्षुण्ण छाप मारी है उस का यश जैन धर्म ही के योग्य है। जैन धर्म में अहिंसा का सिद्धांत प्रारम्भ से है, और इस तत्व का समझने की त्रुटि के कारण बौद्ध धर्म अपने अनुयायी चीनियों के रूप में सर्व भक्षी हो गया है।

(५) पूर्व काल में अनेक ब्राह्मण जैन पण्डित जैन धर्म के धुरंधर विद्वान हो गए हैं।

(६) ब्राह्मण धर्म जैन धर्म से मिलता हुआ है इस कारण टीक रहा है। बौद्ध धर्म जैन धर्म से विशेष अमिल होने के कारण हिंदुस्तान से नाम शेष हो गया।

(७) जैन धर्म तथा ब्राह्मण धर्म का पीछे से इतना निकट सँबंध हुआ है कि ज्योतिष शास्त्री भास्कराचार्य ने अपने ग्रन्थ में ज्ञान दर्शन और चारित्र (जैन शास्त्र विहित रत्नत्रय धर्म) को धर्म के तत्व बतलाए हैं।

केसरी पत्र १३ दिसम्बर सन १९०४ में भी आप ने जैन धर्म के विषय में यह सम्मति दी है।

ग्रन्थ तथा सामाजिक व्याख्यानों से जाना जाता है कि जैन धर्म अनादि है यह विषय निर्विवाद तथा मत भेद रहित है। सुतरां इस विषय में इतिहास के दृढ सबूत हैं और निदान ईस्वी सन से ५२६ वर्ष पहले का तो जैन धर्म सिद्ध है ही। महावीर स्वामी जैन धर्म को पुनः प्रकाश में लाए इस बात को आज २४०० वर्ष व्यतीत हो चुके हैं बौद्ध धर्म की स्थापना के पहले जैन धर्म फैल रहा था यह बात विश्वास करने योग्य है। चौबीस तीर्थंकरों में महावीर स्वामी अंतिम तीर्थंकर थे, इस से भी जैन धर्म की प्राचीनता जानी जाती है। बौद्ध धर्म पीछे से हुआ यह बात निश्चित है।

[४]

पेरिस (फ्रांस की राजधानी) के डाक्टर ए० गिरनाट अपने पत्र ता० ३—१२—१९११ में लिखा है कि

मनुष्यों की तरक्की के लिए जैन धर्म का चारित्र बहुत लाभकारी है यह धर्म बहुत ही असली, स्वतन्त्र सादा बहुत मूल्यवान तथा ब्राह्मणों के मतों से भिन्न है तथा यह बौद्ध के समान नास्तिक नहीं है।

[५]

जर्मनी के डाक्टर जाहनस हर्टेल ता० १७—६—१९०८ के पत्र में कहते हैं कि,

मैं अपने देश वासियों को दिखाऊंगा कि कैसे उत्तम नियम और ऊंचे विचार जैन धर्म और जैन आचार्यों में हैं। जैन का साहित्य, बौद्धों से बहुत बढ़कर है और ज्यों २ मैं जैन धर्म और उसके साहित्य समझता हूं त्यों २ मैं उनको अधिक पसन्द करता हूं।

[६]

अन्यमतधारी मिस्टर कन्नुलाल जोधपुर की सम्मति—
(देखो The Theosophist माह दिसंबर सन १९०४ व जनवरी सन १९०५)

जैन धर्म एक ऐसा प्राचीन धर्म है कि जिसकी उत्पत्ति तथा इतिहास का पता लगाना एक बहुत ही दुर्लभ बात है। इत्यादि

[७]

मि० आबे जे० ए० डवाई की सम्मति—

(Discription of the character manners and customs of the people of India and of their institutions religion and civil)

इस नाम की पुस्तक में जो सन १८१७ में लंडन में छपी है बहुत बड़े व्याख्यान में जैन धर्म को बहुत प्राचीन लिखा

है। इस में जैनियों के चार भेद प्रथमानुयोग चरणानुयोग, करणानुयोग, और द्रव्यानुयोग, को आदिश्वर भगवान ने रचा ऐसा कहा है और आदिश्वर को जैनियों में बहुत प्राचीन और प्रसिद्ध पुरुष जैनियों के २४ तीर्थंकरों में सब से पहले हुए हैं ऐसा कहा है।

(८)

श्रीयुत वरदाकान्त मुख्योपाध्याय एम० ए० बंगला श्रीयुत नाथूराम प्रेमी द्वारा अनुवादित हिन्दी लेख से उद्धृत कुछ वाक्य।

(१) जैन निरामिष भोजी (मांस त्यागी) क्षत्रियों का धर्म है।

(२) जैन धर्म हिन्दु धर्म से सर्वथा स्वतंत्र है उसकी शाखा या रूपान्तर नहीं है। मेक्समुलर का भी यह ही मत है।

(३) पार्श्वनाथ जी जैन धर्म के आदि प्रचारक नहीं थे परन्तु इसका प्रथम प्रचार रिषभदेवजी ने किया था इसकी पुष्टी के प्रमाणों का अभाव नहीं है।

(४) बौद्ध लोग महावीर जी को निर्ग्रन्थों अर्थात जैनियों का नायक मात्र कहते हैं स्थापक नहीं कहते। जर्मन डाक्टर जेकोबी का भी यह ही मत है।

(५) जैन धर्म ज्ञान और भावको लिये हुए है और मोक्ष भी इसी पर निर्भर है।

(९)

राव वासुदेव गोविंद आपटे बी० ए० इन्दौर निवासी के व्याख्यान से कुछ वाक्य उद्धृत।

(१) प्राचीन काल में जैनियों ने उत्कृष्ट पराक्रम वा राज्य* भार का परिचालन किया है।

(२) जैन धर्ममें अहिंसा का तत्व अत्यन्त श्रेष्ठ है (३) जैनधर्म

* आदिश्वर को जैनी, रिषभदेवजी कहते हैं।

* प्राचीन काल में चक्रवर्ती, महा मण्डलीक, मण्डलीक आदि बड़े२ पदाधिकारी जैनधर्मी हुए हैं जैनियों के परम पूज्य २४ सों तीर्थंकर भी सूर्यवंशी चन्द्रवंशी आदि क्षत्रिय कुलोत्पन्न बड़े२ राज्याधिकारी हुए जिसकी साक्षी जैन ग्रन्थों तथा किसी २ अजैन शास्त्रों व इतिहास ग्रन्थों में भी मिलती है।

र्म यति धर्म से यत उत्कृष्ट है इस में सदेह नहीं (४) जैनियों में स्त्रियों को भी यति दिक्षा लेकर परोपकारी कृत्यों में जन्म व्यतीत करने की आज्ञा है यह सर्वोत्कृष्ट है (६) हमारे हाथ से जीव हिंसा न होने पावे इसके लिए जैनी जितने डरते हैं उतने बौद्ध नहीं डरते। बौद्ध धर्म देशों में मांसाहार अधिकता से जारी है आप स्वत हिंसा न करके दूसरे के द्वारा मारे हुए बकरे आदि का मांस खाने में कुछ दर्ज नहीं ऐसे कुनीते का अहिंसा तत्व जो बौद्धों ने निकाला था वह जैनियों को स्वीकार नहीं है। (७) जैनियों की एक समय हिंदुस्तान में बहुत उन्नतावस्था थी। धर्म, नीति, राज काय धुरंधरता शास्त्रदान समाजोन्नति आदि बातों में उनका समाज इतर जनों से बहुत आगे था।

संसार में अब क्या हो रहा है इस ओर हमारे जैन बंधु ध्यान देकर चलने तो वह महापद पुनः प्राप्त कर लेने में उन्हें अधिक श्रम नहीं पड़ेगा।

[१०]

सुप्रसिद्ध संस्कृतज्ञ प्रोफेसर डा० हर्मन जेकोबी एम० ए० पी० एच० डी० बोन जर्मनी।

जैन धर्म सर्वथा स्वतन्त्र धर्म है मेरा विश्वास है कि यह किसी का अनुकरण नहीं है और इसी लिए प्राचीन भारतवर्ष के तत्वज्ञान का और धर्म पद्धति का अध्ययन करने वालों के लिए यह बड़े महत्व की वस्तु है।

[११]

पूर्व खानदेश के कलक्टर साहिब श्रीयुत ओटोरॉय फिलड साहिब ७ दिसम्बर सन १९१४ को पाचोरा में श्रीयुत बच्छराज जी रूपचन्द जी की तरफ एक पाठशाला खोलने के समय आपने अपने व्याख्यान में कहा कि—

जैन जाति दया के लिए खास प्रसिद्ध है, और दया के लिए हजारों रुपया खर्च करते हैं। जैनी पहले क्षत्री थे, यह उनके चहरे व नाम से भी जाना जाता है। जैनी अधिक शांति प्रिय हैं। (जैन हितेच्छु पुस्तक १६ अङ्क ११ में से)

[१२]

मुहम्मद हाफ़िज सय्यद बी० ए० एल टी थियोसोफि कल हाई स्कूल कानपुर लिखते हैं।

"मैं जैन सिद्धांत के सूक्ष्म तत्वों से गहरा प्रेम करता हूं।

[१३]

रायबहादुर पूर्नेन्दु नारायण सिंह एम ए० बांकीपुर लिखते हैं—

,, जैन धर्म पढ़ने की मेरी हार्दिक इच्छा है, क्योंकि मैं ख्याल करता हूं कि व्यवहारिक योगाभ्यास के लिए यह साहित्य सब से, प्राचीन (Oldest) है यह वेद की रीति रिवाजों से पृथक है इस में हिंदू धर्म से पूर्व की आत्मिक स्वतंत्रता विद्यमान है, जिसको परम पुरुषों ने अनुभव व प्रकाश किया है यह समय है कि हम इसके विषय में अधिक जानें।

[१४]

महा महोपाध्याय प० गंगानाथ झा एम० ए० डी० एल० एल इलाहाबाद—

"जब से मैंने शंकराचार्य द्वारा जैन सिद्धांत पर खंडन को पढ़ा है, तब से मुझे विश्वास हुआ कि इस सिद्धांत में बहुत कुछ है जिसको वेदांत के आचार्य ने नहीं समझा, और जो कुछ अब तक मैं जैन धर्म को जान सका हूं उस से मेरा यह विश्वास दृढ़ हुआ है कि यदि वह जैन धर्म को, उसके असली ग्रंथों से देखने का कष्ट उठाता तो उनको जैन धर्म से विरोध करने की कोई बात नहीं मिलती।

[१५]

नैपालचन्द्र राय अधिष्ठाता ब्रह्मचर्याश्रम शांतिनिकेतन बोलपुर—मुझको जैन तीर्थंकरों की शिक्षा पर अतिशय भक्ति है।

में यति धर्म श्रावक धर्म उत्कृष्ट है इस में संदेह नहीं (४) जैनियों में स्त्रियों को भी यति दिक्षा लेकर परोपकारी कृत्यों में जन्म व्यतीत करने की आज्ञा है यह सर्वोत्कृष्ट है (६) हमारे हाथ से जीव हिंसा न होने पावे इसके लिए जैनी जितने डरते हैं उतने बौद्ध नहीं डरते । बौद्ध धर्म देशों में मांसाहार अधिकता से जारी है आप स्वतः हिंसा न करके दूसरे के द्वारा मारे हुए बकरे आदि का मांस खाने में कुछ हर्ज नहीं ऐसे सुभीते का अहिंसा तत्व जो बौद्धों ने निकाला था वह जैनियों को स्वीकार नहीं है । (७) जैनियों की एक समय हिंदुस्तान में बहुत उन्नतावस्था थी । धर्म, नीति, राजकार्य धुरंधरता शास्त्रदान समाजोन्नति आदि बातों में उनका समाज इतर जनों से बहुत आगे था ।

संसार में अब क्या हो रहा है इस ओर हमारे जैन बंधु लक्ष देकर चलेंगे तो वह महापद पुनः प्राप्त कर लेंगे । उन्हें अधिक श्रम नहीं पड़ेगा ।

[१०]

सुप्रसिद्ध सस्कृतज्ञ प्रोफेसर डा० हर्मन जेकोबी एम० ए० पी० एच० डी० बोन जर्मनी ।

जैन धर्म सर्वथा स्वतंत्र धर्म है मेरा विश्वास है कि यह किसी का अनुकरण नहीं है और इसी लिए प्राचीन भारतवर्ष के तत्वज्ञान का और धर्म पद्धति का अध्ययन करने वालों के लिए यह बड़े महत्व की वस्तु है ।

[११]

पूर्व खानदेश के कलक्टर साहिब श्रीयुत आटोरीय फि- साहिब ७ दिसम्बर सन १९१४ को पाचोरा में श्रीयुत बच्छरा जी रूपचन्द जी की तरफ एक पाठशाला खोलने के स- आपने अपने व्याख्यान में कहा कि—

जैन जाति दया के लिए खास प्रसिद्ध है, और द- लिए हजारों रुपया खर्च करते हैं । जैनी पहले क्षत्री यह उनके चहरे व नाम से भी जाना जाता है । जैनी शांति प्रिय हैं । (जैन हितेच्छु पुस्तक १६ अङ्क ११ में से)

दिल विशाल था, वह एक वेपायाकिनार समुद्र था जिस में मनुष्य प्रेम की लहरें ओर शोर से उठती रहती थी और सिर्फ मनुष्य ही क्यो, उन्होंने संसार के प्राणीमात्र की भलाई के लिए सब-घर त्याग किया जानदारों का खून वहाना रोकने के लिए अपनी जिंदगी का खून कर दिया। यह अहिंसा की परम ज्योति वाली मूर्तियाँ हैं। वेदो की श्रुति "अहिंसा परमो धर्म" कुछ इन्हीं पवित्र महान पुरुषों के जीवन में असली सूरत इख्तियार करती हुई नजर आती है।

ये दुनियाँ के जबरदस्त रिफार्मर, जबरदस्त उपकारी और बड़े ऊंचे दर्जे के उपदेशक और प्रचारक गुजरे हैं। यह हमारी कौमी तवारीख (इतिहास) के कीमती (बहुमूल्य) रत्न हैं। तुम कहां और किन में धर्मात्मा प्राणियों की खोज करते हो इन्हीं को देखो इन से बेहतर (उत्तम) साहबे कमाल तुम को और कहां मिलेंगे। इन में त्याग था, इन में वैराग्य था, इन में धर्म का कमाल था यह इन्सानी कमजोरियों से बहुत ही ऊंचे थे। इनका खिताब "जिन" है जिन्हों ने मोह माया को और मन और काया को जीत लिया था। यह तीर्थंकर हैं। इन मे बनावट नहीं था, दिखावट नही थी, जो बात थी साफ साफ थी। ये वह लासानी (अनोपम) शख्सीयतें हो गुजरी हैं जिनको जिसमानी कमजोरियों व ऐबों के छिपाने के लिये किसी जाहिरी पोशाक की जरूरत लाहक नही हुई। क्यों कि उन्होंने तप करके, जप करके योग का साधन करके अपने आपको मुकम्मल और पूर्ण बना लिया था इत्यादि इत्यादि

(१७)

श्रीयुत तुकाराम कृष्ण शर्मा लट्टु बी० ए० पी एच० डी० एम० आर० ए० एस० एम० ए० एस० बी०एम० जी०ओ० एस० प्रोफेसर संस्कृत शिलालेखादि के विषय के–अध्यापक क्विन्स कालिज बनारस।

स्याद्वाद महा विद्यालय काशी के दशम वार्षिकोत्सव पर दिये हुए व्याख्यान में से कुछ वाक्य उद्धृत।

(१) प्राचीन समय में इस भारत वर्ष में "ऋषभदेव" नाम के महर्षि उत्पन्न हुए, वे दयावान भद्रपरिणामी, पहिले तीर्थंकर हुए जिन्होंने मिथ्यात्व अवस्था को देखकर "सम्यग्दर्शन सम्यग्ज्ञान और सम्यग्चारित्र रूपी मोक्ष शास्त्र का उपदेश किया। बस यह ही जिन दर्शन इस कल्प में हुआ। इसके पश्चात अजितनाथ से लेकर महावीर तक तेईस तीर्थंकर अपने २ समय में अज्ञानी जीवों का मोह अन्धकार नाश करते रहे।

(१८)

साहित्य रत्न डाक्टर रवीन्द्रनाथ टागोर कहते हैं कि—

महावीर ने डौंडीम नाद से हिंद में ऐसा संदेश फैलाया कि:—धर्म यह मात्र सामाजिक रूढ़ि नहीं है परन्तु वास्तविक सत्य है। मोक्ष यह बाहरी क्रिया कांड पालने से नहीं मिलता परन्तु सत्य धर्म स्वरूप में आश्रय लेने से ही मिलता है। और धर्म और मनुष्य में कोई स्थायी भेद नहीं रह सकता। कहते आश्चर्य पैदा होता है कि इस शिक्षा ने समाज के हृदय में जड़ करके बैठी हुई भावना रूपी विघ्नों को त्वरा से भेद दिये और देश को वशीभूत कर लिया। इसके पश्चात् बहुत समय तक इन क्षत्रिय उपदेशकों के प्रभाव बल से ब्राह्मणों की सत्ता अभिभूत होगई थी।

(१९)

टी. पी. कुप्पुस्वामी शास्त्री एम. ए. आसिसटेन्ट गवर्नमेन्ट म्युजियम तंजोर के एक अंग्रेजी लेख का अनुवाद "जैन हितैषी भाग १० अंक २ में छपा है उस में आपने बतलाया है कि—

(१) तीर्थंकर जिनसे जैनियों के विख्यात सिद्धांतों का प्रचार हुआ है आर्य क्षत्रिय थे (२) जैनी अवैदिक भारतीय आर्यों का एक विभाग है।

(२०)

श्री स्वामी विरूपाक्ष वाडियर "धर्म भूषण" "पण्डित" "वेद तीर्थ" "विद्या[illegible] [illegible] कालेज इन्दौर

स्टेट' आपका 'जैन धर्म मीमांसा" नाम का लेख चित्र मय जगत में छपा है उसे 'जैन पथ प्रदर्शक' आगरा ने दीपावली क अंक में उद्धृत किया है उस के कुछ वाक्य उद्धृत—

(१) ईर्षा द्वेष के कारण धर्म प्रचार को रोकने वाली विपत्ति के रहते हुए जैन शासन कभी पराजित न हो कर सर्वत्र विजयी ही होता रहा है। इस प्रकार जिस का वर्णन है वह 'अर्हन्देव' साक्षात परमेश्वर (विष्णु) स्वरूप है इसके प्रमाण भी आर्य ग्रंथों में पाये जाते हैं।

(२) उपरोक्त अर्हन्त परमेश्वर का वर्णन वेदों में भी पाया जाता है।

(३) एक बंगाली बैरिष्टर ने 'प्रेक्टिकल पाथ' नामक ग्रन्थ बनाया है। उस में एक स्थान पर लिखा है कि रिषभदेव का नाती मरीचि प्रकृति वादि था, और वेद उसके तत्वानुसार होने के कारण ही ऋग्वेद आदि ग्रन्थों की ख्याति उसी के ज्ञानद्वारा हुई है फलत मरीचि रिषी के स्त्रोत, वेद पुराण आदि ग्रन्थों में है यदि स्थान स्थान पर जैन तीर्थंकरो का उल्लेख पाया जाता है तो कोई कारण नहीं कि हम वैदिक काल में जैन धर्म का अस्तित्व न मानें।

(४) सारांश यह है कि इन सब प्रमाणों से जैन धर्म का उल्लेख हिंदुओं के पूज्य वेद में भी मिलता है।

(५) इस प्रकार वेदो में जैन धर्म का अस्तित्व सिद्ध करने वाले बहुत से मंत्र हैं। वेद के सिवाय अन्य ग्रन्थो में भी जैन धर्म के प्रति सहानुभूति प्रगट करने वाले उल्लेख पाये जाते हैं। स्वामी जी ने इस लेख में वेद, शिव पुराणादि के कई स्थानों के मूल श्लोक दे कर उस पर व्याख्या भी की है।

(६) पीछे से जब ब्राह्मण लोगों ने यज्ञ आदि में बलिदान, कर 'मा हिंसात सर्व भूतानि', वाले वेद वाक्य पर हरताल

फेर दो उस समय जैनियों ने जब दिमागम बद मागादि का उन्द्रेद करना आरम्भ किया था उस समी से ब्राह्मणों के दिल में जैनो के प्रति द्वेष बढ़ने लगा परन्तु फिर भी भागवतादि महा पुराणो में ऋषभदेव के विषय में गौरव युक्त उल्लेख मिल रहा है।

(२१)

अमृत लाल सरकार एम० ए० बी० एल० लिखित "जैन दर्शन जैन धर्म" के जैन हितैषी भाग १२ अङ्क ९-१० में छपा है उस में के कुछ वाक्य।

(१) यह अच्छी तरह प्रमाणित हो चुका है कि जैन धर्म बौद्ध धर्म की शाखा नहीं है (महावीर स्वामी जैन धर्म के स्थापक नहीं हैं उन्हों ने केवल प्राचीन धर्म का प्रचार किया है

(२) जैन दर्शन में जीव तत्व की जैसी विस्तृत आलोचना है और वैसी किसी भी दर्शन में नहीं है।

आवश्यक १० बोल ।

(१) जैन धर्म आत्मा का निज स्वभाव है और एक मात्र उसी के द्वारा सुख सम्पादन किया जा सक्ता है।

(२) सुख मोक्ष में ही है जिसको कि प्राप्त कर के यह अनादि कर्म मल से संसार चतुर्गति में परिभ्रमण करने वाला अशुद्ध और दुखी आत्मा निज परमात्म स्वरूप को प्राप्त कर सदैव आनन्द में मग्न रहा करता है।

(३) स्मरण रक्खो कि मोक्ष मांगने और किसी के देने से नहीं मिलती। उसकी प्राप्ति हमारी पूर्ण वीतरागता और पुरुषार्थ से कर्म मल और उनके कारण नष्ट करने पर ही अवलम्बित है।

(४) स्याद्वाद सत्यता का स्वरूप है और वस्तु के अनन्त धर्मों का यथार्थ कथन कर सक्ता है।

(५) जैन धर्म ही परमात्मा का उपदेश है क्योंकि वहां पूर्वा पर विरोध और पक्षपात नहीं सब जीवों को उनके कल्याण का उपदेश देता है और सभी से परमात्मा की सिद्धि और छाप इस संसार में है।

(६) एक मात्र 'ही' और 'भी' ही अन्य धर्म और जैन धर्म का भेद है। यदि उन सब के भाव और उपदेश की इयत्ता की 'ही' 'भी' म बदल दी जाय तो उन्हीं सबका समुदाय जैन धर्म है।

(७) मत समझो कि जैन धर्म किसी समुदाय विशेष का ही धर्म है या हो सक्ता है। मनुष्यों की तो कहे कौन जीवमात्र इस को स्वशक्त्यानुसार धारण कर तद्रूप निज कल्याण कर सकता है।

(८) जैनधर्म के समस्त तत्व और उपदेश वस्तु स्वरूप, प्राकृतिक नियम, न्यायशास्त्र अनुभवानुष्ठान और विकाश सिद्धान्त के अनुसार होने के कारण सत्य है।

(९) सर्वज्ञ वीतराग और हितोपदेशक देव, निर्ग्रन्थ गुरु और अहिंसा प्ररूपक शास्त्र ही जीव को यथार्थ उपदेश दे सकते हैं और उन सबके रखने का सौभाग्य एक मात्र जैन धर्म को ही प्राप्त है।

(१०) समस्त दुःखों से उद्धार करने वाली जैनेन्द्री दीक्षा ही है। यदि उसकी शक्ति न हो तो भी वैसा लक्ष्य रख अन्याय और अभक्ष्य का त्याग करके गृहस्थ मार्ग द्वारा क्रमशः स्वपर कल्याण करते रहना चाहिये।

॥ समाप्त ॥

श्री दिगम्बर जैन धर्म प्रकाशक मंडल देहली ने अजैन विद्वानों की सम्मति संग्रह कर "जैन धर्म का महत्व" नामा ट्रैक्ट ता० २८ जनवरी १९२१ को इस प्रकार प्रकाश किया था।

जैनधर्म का महत्त्व

(१) सुप्रसिद्ध श्रीयुत महात्मा शिवव्रतलालजी वर्मन M, A, 'साधु' "सरस्वती भण्डार" 'तत्त्वदर्शी' मार्तण्ड "लक्ष्मीभण्डार" "सन्त" "सन्देश" आदि उर्दू तथा नागरी मासिक पत्रों के सम्पादक "विचार कल्पद्रुम" "विवेक कल्पद्रुम" "वेदान्त कल्पद्रुम" आदि के रचयिता विष्णुपुराणादि अनेक ग्रन्थों के अनुवादक

इन महात्मा महानुभाव द्वारा सम्पादित 'साधु' नामक उर्दू मासिकपत्र जनवरी सन १९११ के अङ्क में प्रकाशित "महावीर स्वामी का पवित्र जीवन" नामक लेख का सारांश (जो न केवल श्रीमहावीर स्वामी के सम्बन्ध में किंतु ऐसे सर्व जैन तीर्थंकरों, व जैन मुनियों के सम्बन्ध में समझना)।

हिन्दुओं में ऐसे लोग कम नज़र आयेंगे जो महावीर स्वामी के पाक और मुकद्दस नाम से वाकिफ होंगे। ये जैनियों के आचार्य गुरु थे। पाक दिल, पाक ख्याल, मुजस्सिम पाकी व पाकीज़गी थे।

हिंदुओ! अपने बुजुर्गों की इज्जत करना सीखो, मज़हबी इख्तलाफात की वजह से उनकी शान में भूलकर भी कलमे नाशाया इस्तेमाल न करो। जैनी हम से जुदा नहीं हैं। उन

कलम दावात कागज पास था, एक रुबाई लिखी और बादशाह के खिलअत को या हीं वापस कर दिया। रुबाई यह थी ?

ऑकस कि तुरा कुलाह सुल्तानी दाद
मारा हम ओ असबाब परेशानी दाद ॥
पोशानीद लबास हर किरा ऐबे दीद ।
बे ऐबेंग लिबास उर्यानी दाद ॥

भावार्थ, जिसने तुमको बादशाही ताज दिया उसी ने हमको परेशानी का सामान दिया जिस किसी में कोई ऐब पाया उस को लिबास पहनाया और जिनमें ऐब न पाए उनको नंगेपन का लिबास दिया

ये लाख रुपये का कलाम है और यह इन जैसी महात्माओं की पाक जिंदगी के हालात हैं। फकीरों की उरयानी देखकर तुम क्यों नाक भौं सकोड़ते हो ? उनके भावों को क्यों नहीं देखते ? सिद्धांत यह है कि आत्म को शारीरिक बंधन से और तालुकात के पोशिश से आजाद करके बिलकुल नंगा कर लिया जाय ताकि इसका निज रूप देखने में आवे। वे आत्मज्ञानी थे आत्मा का साक्षात्कार कर चुके थे। यह ऐबका बात क्या है ? तुम्हारे लिए ऐब हो। बस इतनी ही बातपर तुम नफरत करते हो और हकीकत को नहीं समझते तुमको क्या कहा जाय तुम ईश्वर कुटी में रहने वालों को अपने ऐसा आदमी समझते हो यह तुम्हारी गलती है या नहीं ?

Other writers possessing more information than I do, will hereafter instruct us more fully concerning this interesting sect of Hindus and particularly respecting their religious worship, which probably at one time was that of all Asia from Sibiria to Cap Comorin, north to south, and from the caspian to the gulf of Kamaschatka, from west to East, &c —

अर्थ—मैंने अन्त में एक (Appendix) लगाया है, जिस में मैंने जैनियों और उन के मन्तव्य, उन के धर्म की बड़ी २ बातें और विशेष रीति रिवाजों का वर्णन किया है। मुझ से अधिक ज्ञान वाले अन्य लेखक महाशय हिंदुओं की इस साम्प्रदायक जाति और विशेष उनकी धर्म सम्बन्धी पूजा के हाल से हमको आइंदा अधिक परिचित करेंगे। यह पूजा किसी समय में अवश्य सारे एशिया (Asia) में अर्थात उत्तर में साईबेरिया (Sibiria) से दक्षिण रास कुमारी (Cape Comorin) तक और पश्चिम में कैस्पियन झील (Lake Caspian) से लेकर पूर्व में कमस्कटका की खाड़ी (Gulf of Kamaschatka) तक फैली हुई थी, इत्यादि। क्या इस से अधिक स्पष्ट और विश्वास योग्य अन्य कोई साक्षी हो सकती है?

(९) बाबू प्यारेलाल जी साहब जिमींदार, बरोठा। जिन्होंने अनेक उपयोगी पुस्तकें लिखी है उन्होंने "हिंदुस्तान कदीम" नाम की उर्दू की पुस्तक लिखी है जिस में आपने जैन धर्म युरोप (EUROPE) में भी फैला हुआ था आदि [illegible] लेख लिखे हैं पर कथन बढ़ने के भय से यहा सिर्फ [illegible]ा (Africa) में भी जैन धर्म फैला हुआ था इस [illegible] संक्षेप लेख लिखा जाता है उसके पृ०, ९७ पर इस [illegible] है—

[illegible] प्रकार पुरान में हमने साबित किया कि, हिंदु-[illegible]नवाचक (हमनाम) शहर और पर्वत विद्यमान हैं

काश और क्रम को धारण किया न्याय दर्शन जिसे गौतम आदि गौतम ने बनाया है अध्यात्म विद्या के रूप में असम्भव हो जाता। यदि जैन और बौद्ध अनुमान चौथी शताब्दि में न्याय का यथार्थ और सत्याकृति में अध्ययन न करते, जिस समय, मैं जैनियों के न्यायावतार, परीक्षा मुख, न्यायप्रदीपिका, आदि कुछ न्याय ग्रंथों का सम्पादन और अनुवाद कर रहा था उस समय जैनियों की विचार पद्धति यथार्थता, सूक्ष्मता, सुनिश्चितता, और संक्षिप्तता, को देखकर मुझे आश्चर्य हुआ था और मैंने धन्यवाद सहित इस बात को धारण (नोट) किया है कि किस प्रकार से प्राचीन न्याय-पद्धति ने जैन नैयायिकों के द्वारा क्रमश उन्नति लाभ कर वर्तमान रूप धारण किया है, इत्यादि।

(३) फादर अबे० जे० ए० डुबाई साहब मैसूर देश में प्रसिद्ध पादरी थे आपने फ्रांसीसी भाषा में भारत के लोगोंका हाल लिखाहै "लार्ड विलियम बेंटिङ्क (Lord william Bentinck) जो हिन्दुस्तान के गवर्नर जनरल (Governor General) रह चुके हैं उन्होंने भी उस पुस्तक की बहुत प्रशंसा लिखी है इस पुस्तक की भूमिका के अन्त में सम्पादक ने इस प्रकार लिखा है —

Fr Abbe J A Dubois, Christian missionary states in the "Description of he Character, manners and customs, of the people of India and of their institution, religious and civil" as following —

"I have subjoined to the whole an appendix containing a brief account of the Jains, of their doctrines the principal points of their religion and their peculiar customs

---

Other writers possessing more information than I do, will hereafter instruct us more fully concerning this interesting sect of Hindus and particularly respecting their religious worship, which probably at one time was that of all Asia from Sibiria to Cap Comorin, north to south, and from the caspian to the gulf of Kamaschatka, from west to East, &c—

अर्थ—मैंने अन्त में एक (Appendix) लगाया है, जिस में मैंने जैनियों और उन के मन्तव्य, उन के धर्म की बड़ी २ बातें और विशेष रीति रिवाजों का वर्णन किया है। मुझ से अधिक ज्ञान वाले अन्य लेखक महाशय हिंदुओं की इस लाभदायक जाति और विशेष उनकी धर्म सम्बधी पूजा के हाल से हमको आइन्दा अधिक परिचित करेंगे। यह पूजा किसी समय में अवश्य सारे एशिया (Asia) में अर्थात उत्तर में साईबिरिया (Sibiria)से दक्षिण रास कुमारी (Cape Comorin) तक और पश्चिम में कैस्पियन झील (Lake Caspian) से लेकर पूर्व में कमस्कटका की खाड़ी (Gulf of Kamaschatka) तक फैली हुई थी, इत्यादि। क्या इस से अधिक स्पष्ट और विश्वास योग्य, अन्य कोई साक्षी हो सकती है?

(९) बाबू प्यारेलाल जी साहब जिमींदार, बरोठा। जिन्होंने अनेक उपयोगी पुस्तकें लिखी हैं उन्होंने "हिंदुस्तान कर्दम" नाम की उर्दू की पुस्तक लिखी है जिस में आपने जैन धर्म युरोप (EUROPE) में भी फैला हुआ था आदि अनेक लेख लिखे हैं पर कथन बढ़ने के भय से यहां सिर्फ 'अफ्रीका' (Africa) में भी जैन धर्म फैला हुआ था इस विषय में संक्षेप लेख लिखा जाता है उसके पृ०, ९२ पर इस प्रकार लिखा है—

"जिस प्रकार युनान में हमने साबित किया कि, हिंदुस्तान के समानवाचक (हमनाम) ,शहर और पर्वत विद्यमान हैं

इसी प्रकार मिश्र देश में जाने वाले भाई भी अपने प्यारे पर्वत (जन्म भूमि) को नहीं भूले। उन्होंने भी यहां एक पर्वत का नाम Meroe (सु—मेरु) रक्खा। दूसरे पर्वत का नाम (Kaila) (कैलाश) रक्खा। एक झील का नाम यहां (Menza Lake) (मनसा) मौजूद है। एक शहर का नाम भी On ग्राम है। एक सूबा (Gurna) गिरनार है जिस में मन्दिर और मूर्तियाँ गिरनार जैसी आज तक मिलती हैं जो अवश्य यहां के ही लोगों ने बसाया होगा" इत्यादि।

ऊपर जिस गिरनार का वर्णन आया है वह जैनियों का प्रसिद्ध तीर्थ जूनागढ़ के पास काठीयावाड़ में है जहां से २२ वें तीर्थंकर श्रीनेमिनाथ स्वामी मोक्ष को पधारे थे।

आगे चलकर इसी पुस्तक के पृष्ठ ४३ पर इस प्रकार लिखा है —

"कुछ शहरों पर ही मौकूफ नहीं। मिश्र के बहुत से देवताओं के खालिस नाम संस्कृत भाषा के हैं, जैसे (Tirtheka) तीर्थंकर जैनी फिरके के पुजारी।"

(५) प० लेखराम जी आर्य्य समाजी ने 'रिसाला जेहाद' नामी पुस्तक में पृ० २५ पर एक नकशा उन देशों का दिया हुआ है। जिन में मुसलमानों का मत फैला, उसी नकशे की कैफियत के खाने में देशों के नाम के सामने अन्य धर्मों के नाम भी लिखे हुवे हैं, जो वहां किसी समय में उन देशों में फैले थे, उस में मिश्र (Egypt) और नाटाल (Natal South Africa) देशों के सामने जैनी भी लिखे हैं भावार्थ पण्डित जी के लेखानुसार मिश्र नाटाल आदि देशों में भी जैन धर्म की ध्वजा फहरा रही थी।

(६) "Oriental" October 1802, page No 23,24) 'ओरियंटल" पत्र माह ओक्टूबर सन १८०२ के पृ० २३ व २४ पर "भारतवर्ष में सब से पुरानी इमारत" नामी लेख

में भी जैनियों का मिश्र देश से सम्बन्ध लिखा है स्थानाभाव से उस लेख को यहां प्रकाशित नहीं किया गया सो पाठकगण क्षमा करें—

इन उपरोक्त प्रमाणों से स्पष्ट तौर पर सिद्ध होता है कि जैन धर्म किसी समय में सारे एशिया, युरोप, अफ्रीका आदि देशों में भी फैला हुआ था—

अब मैं आप लोगों के सामने कुछ अजैन ग्रंथों के प्रमाण रखता हूं सो कृपया ध्यान पूर्वक पक्षपात तजकर विचार करें—

महाभारत के आदि पर्व अध्याय ३ श्लोक २६ में लिखा है कि—

साधयामस्तावदि त्युक्त्वा प्रातिष्ठतो त्तङ्कस्ते कुण्डलेगृहीत्वा सोऽपश्यदथ पथिनग्न क्षपणकमा-गच्छन्तमुहुर्मुहुर्दृश्य मानमदृश्य—मानंच ॥१२६॥

भावार्थ, मैं यत्न से आऊंगा ऐसा कह कर उत्तंक ने उन कुण्डलों को लेकर चल दिया उसने रास्ते में नग्न "क्षपणक" को आते हुए देखा—

अर्थात ब्रह्म सिद्धि का बनाने वाला "क्षपणक" को "जैन साधु" लिखा है देखो (कलकत्ते की छपी हुई पृ० १६७)

"क्षपणका जैन मार्ग सिद्धान्त प्रवर्त का इति केचित,,

अर्थ "क्षपणक" जैनमत के सिद्धांत को चलाने वाले कोई होते हैं——

उपरोक्त कथन सिद्ध करता है कि महा भारत के समय जैन सिद्धांत को चलाने वाले क्षपणक (जैनसाधू) मौजूद थे—

मत्स्य पुराण के २४ वें अध्याय में लिखा है कि—

गत्वाथ मोहयामास रजिपुत्रा न् बृहस्पतिः ।
जिनधर्मं समास्थाय वेद बाह्यं सवेदवित् ॥

अर्थ-उनरति के पुत्र को भी 'बृहस्पति' जी ने उनके पास जाकर मोहा और आज्ञा दी, कि तुम सब "जैन धर्म के आसरे हो जाओ" ऐसा कहकर बृहस्पति जी भी वेद के बाहर मत को चलाने भए।

पाठको ! जरा विचार कर देखो आप लोगों को मालुम होगा कि वेदों में "बृहस्पति जी" की बहुत प्रशंसा लिखी है इस से यह मतलब निकला कि वेदों के पहिले भी बृहस्पति जी हैं और जैन धर्म, वेद और बृहस्पति जी दोनों से भी पहिले का रहा, जैन धर्म पहिले का हो नहीं बल्कि 'बृहस्पति जी" को कि ब्राह्मणों के ज्ञाति मात्र विद्यासागर गुरु समझे जाते हैं उन्होंने भी "जैन धर्म के आसरे हो जाओ" कहा है—

जैनियों के प्रथम तीर्थंकर श्री ऋषभदेव जिनको "आदिनाथ" स्वामी कहते हैं उनके स्मरण करने का कितना महात्म्य लिखा है—

शिवपुराण में लिखा है कि—

अष्ट षष्टिपुतीर्थेषु यात्राया यत्फलं भवेत् ।
आदिनाथस्य देवस्य स्मरणेनापि तद्भवेत् ॥

अर्थ—अडसठ (६८) तीर्थों की यात्रा करने से जितना फल होता है उतना ही फल श्रीआदिनाथ जी के स्मरण करने से होता है।

यजुर्वेद संहिता अध्याय ९ वा श्रुति २५ में ऐसा लिखा है कि—

वाजस्य नु प्रसव आबभूवेमाच विश्वाभुवनानि सर्वतः सनेमिराजा परियाति विद्वान् प्रजा पुष्टि वर्धमानो अस्मै स्वाहा. ॥

इस श्रुति में श्री नेमनाथ जी की प्रशंसा करते हुए आहुति दी है आप लोगों को अच्छी तरह मालुम होगा कि जैनियों के २२ वें तीर्थंकर का नाम श्री नेमनाथ जी है।

"हनुमान नाटक" (बम्बई के खेमराज श्रीवेंकटेश्वर प्रेस में सम्वत १६५७ में छपा) उसके पन्ने ७ पर यह श्लोक है।

य शैवा. समुपासते शिव इति ब्रह्मेति वेदांतिनो।
बौद्धा बुद्ध इति प्रमाण पटवः कर्तेति नैयायिका ॥
अर्हन्नित्यथ जैन शासनरताः कर्मेति मीमांसकाः ।
सोऽयवो विदधातु वान्छित फलं त्रैलोक्य नाथ.प्रभुः

(अ० १ श्लोक तीसरा)

नोट—आदिनाथ भगवान का जैन सम्बत इस पुस्तक के आदि में जानना ।

॥ धर्म ॥

धर्म उसे कहते हैं जो वस्तु के स्वभाव को प्रगट करता है यानी "वस्तु स्वभावो धम्मो" जो हमारा निज स्वभाव केवलज्ञान है उसका प्रगट होना जैसे अग्निका स्वभाव उष्णता इत्यादि। धर्म जीव के चलने में सहाई होना है जैसे मछली के चलने में जल सहायक है जो २ धर्म के विरुद्ध कार्य है उसको अधर्म कहते हैं, धर्म अधर्म अनादि है। धर्म हमारा निज स्वभाव है इसको सब मानगे यानी हमारा यह स्वभाव है कि —

(१) हमको कोई न मारे पस हमको भी किसी जीव का घात नहीं करना चाहिये।

(२) हम से कोई झूंट नहीं बोले पस हमको भी झूठ नहीं बोलना चाहिये ।

(३) हमारी कोई चारी न करे पस हमको भी चोरी न करनी चाहिये। इत्यादि ?

What's ill to self do it not against Others

धर्म स्वभाव आप ही जान।
आप स्वभाव धर्म सोई जान॥
जब वह धर्म प्रगट तोहे होइ।
तब परमातम पद लख सोइ॥

अथवा इस आत्मा का गुण अनंत दर्शन, अनंत ज्ञान, अनंत वीर्य और अनंत सुख जो हैं वह घातिया कर्मों के क्षय करने पर आत्म स्वभाव केवल ज्ञानादि प्रकट होता है अथवा उत्तम क्षमा, मार्दव, आर्जव, सत्य, शौच, संजम, तप, त्याग, अकिंचन और ब्रह्मचर्य दश लक्षण रूप धर्म है तथा रत्नत्रय (सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान और सम्यग्चारित्र) स्वरूप है तथा जीवन को दया रूप धर्म है ऐसे पर्याय बुद्धी शिष्यनि के समझाने के अर्थ आचार्यों ने धर्म शब्द कू चार प्रकार वरनन किया तोहू वस्तु जो आत्मा ताका स्वभाव ही दश लक्षण है। क्षमादि दश प्रकार आत्मा का ही स्वभाव है। सम्यग्दर्शनज्ञान चारित्र हू आत्मा तै भिन्न नहो। दया है सो हू आत्मा का ही स्वभाव है। यानो "अहिंसा परमो धर्म" यह धर्म जीव मात्र का धर्म है जो जिनेंद्र भगवान करि कहा गया है। धर्म अनादि है स्वर व्यञ्जन अनादि हैं। धर्म तीर्थंकरों केवल ज्ञानियों के मुख से प्रगट होता है। जैसे कमल के उत्पन्न होन का स्थान सिर्फ जल है ऐसा भगवान जिनेंद्र करि कहा हुआ धर्म उसको जैन धर्म कहते हैं या सनातन धर्म भी कहते हैं। जो इस धर्म को धारण करता है उसे जैनी या श्रावक कहते हैं यदि कोई जैन कुल में उत्पन्न हो, मिथ्यात और कुसंगति के प्रसङ्ग से धर्म के विरुद्ध आचरण करे या मन माने दान गावे तो उसके दृष्टांत से जैन धर्म पर आक्षेप नहो

हो सक्ता है।

जैन धर्म के उसूलों को पढ़िए अथवा उनका मनन करिए तो ज्ञात होगा कि यह अमूल्य रत्न है। इस बात को सत्य प्रमाणिए कि यदि जैन धर्म में जीव लग जावे तो यह अपने को धन्य समझेगा। बाजार में हम एक धेले की हांडी लेने जाते हैं उसको खूब टंकारा देकर परीक्षा करते हैं कि फूटी न हो, जो पानी भरने पर सब निकल जावे। क्या भाइयों हमको भी धर्म परीक्षा नहीं करना चाहिए? अवश्य करना चाहिए यह हमारे परभव का सुधार करने वाला और सार वस्तु है। हांडी सो असार वसको जांचकरें और सार वस्तु "धर्म" को जांच न करें। इनका न्याय करना हर स्त्री पुरुष का परम कर्तव्य होना चाहिए। पस इन चार रत्नों (देव गुरु धर्म शास्त्र) का हर एक को परखना उचित है प्रमादी नहीं रहना, यथारथ धर्म वही जीव धारण कर सक्ता है जो प्रमादी (आलसी) न हो और विनयवान हो। विनय से विशेष गुण प्रकट होते हैं जैसे एक बरतन में कड़ी कड़ी सूखी कोंपलें भरिए और उस ही बर्तन में हरी नरम नरम कोंपलें उसी जाति की भरिए तो यह स्पष्ट ज्ञान होगा कि हरी हरी कोंपलों की तादाद राकड़ी से कई गुनी ज्यादा होगी। इसी तरह विनयवान जीव के हृदय में यह जैन धर्म प्रवेश करता है धर्म का मूल ही "विनय" है, विनय पांच प्रकार का है।

दर्शन विनय—आत्मा और पर का भेद जानना। सम्यग्दर्शन के धारक में प्रीति करना।

ज्ञान विनय—ज्ञान का आदर करना बहुत आदर से पढ़ना ज्ञानी जन और पुस्तक का बड़ा लाभ मानना।

चारित्र विनय—अपनी शक्ति प्रमाण चारित्र धारण में हर्ष करना, दिन २ चारित्र की उज्जलता के अर्थि विषय कषायनि को घटावना, तथा चारित्र के धारकनि के गुणनि में अनुराग स्तवन आदर करना सो चारित्र विनय है।

तप विनय—इच्छा कू रोक मिले हुए विषयन में सतोप कर ध्यान स्वाध्याय में लगना और अनशनादि करना काम के जीतने को, सो तप विनय है।

उपचार विनय—पंच परमेष्ठी का हर तरह विनय सो उपचार विनय है। इस के दो भेद हैं प्रत्यक्ष विनय यानी पंच परमेष्ठी के सन्मुख विनय करना और "परोक्ष विनय" यानी पंच परमेष्ठी का चिंतन करना।

विनय वादी के ३२ भेद होते हैं यानी — मन वचन काय और दान। इन चार से आठ का विनय करना। यानी—माता, पिता, देव, नृप, ज्ञाति, बाल, वृद्ध, और तपस्वी।

॥ गजल ॥

धर्म वो चीज है भाई कि जिसकी शक्ति न्यारी है।
राग और सोग भी टारे यह उस में सिफत भारी है॥
अरोगी हो गए कुष्टी दरिद्री धन का धारी है।
अग्नि जल डर जहां होवे धर्म का मदद भारी है॥
शूली से सेज को तारा, किया श्रीपाल दधिपारा।
अग्नि में फूल कर दाने जहां सीता निठारी है॥
वो कपटी चोर अंजनसा भी पहुँचाया मुक्तिपुर में।
मिली जंगल में लक्षमण राम को सेना जो भारी है॥
जगत के देव, गुरु, देखे किसी के संग नारी है।
कोई क्रोधी कोई लोभी नाम जहां मुरारी है
धर्म सब जगत में मानें नहीं जाने हैं गाना उसका।

धरम वो सारथी हैगाके जिसकी मुक्त नारी है ॥
सेवक तुम हो गए मूरख जो अवनक धर्म ना जाना ।
धरम हिंसा में गहकर तैने अपनी गति बिगारी है ॥

॥ दीप मालिका ॥

प्रिय बन्धु वर्गो ! २४ वें तीर्थंकर श्री महावीर स्वामी का धर्म चक्र चल रहा है, वे कार्तिक कृष्णा अमावस्या के सूर्य निकलने से पहले मोक्ष पधारे थे यानी सिद्ध होगए, उसी समय उनके गणधर श्री गौतम स्वामी को केवल ज्ञान उत्पन्न हुआ था चूंकि केवल ज्ञान होने पर कुछ रात्रि बाकी थी, देवों ने रत्नों के दीपक जलाए और मनुष्यों ने घी कपूरादि के। उसने केवल ज्ञान और मोक्ष लक्ष्मी का पूजन किया इस यादगार में दीप मालिका (दिवाली) मनाना शुरू मनाया जाने लगा मगर कुछ काल पश्चात काल दोष में लक्ष्मी रुपैयों की कल्पना होगई। बहुतसे तो यह विचार करते हैं कि लक्ष्मी देवी रात्रि में घर २ आती है सो उसके आगमन के लिये बड़ी तय्यारी करते हैं ताकि वह प्रसन्न होकर कुछ का वास गृह में कर देवे।

दक्षिण प्रांत, गुजरात प्रांत में तो पंचांगों में भी इस दीपावली से नया वर्ष प्रारम्भ होता है। प्राय सब जगह नई बहियां इसी दिन से बदलते हैं। महावीर स्वामी श्री पावापुर जी सिद्ध क्षेत्र से निर्वाण हुए थे। डाकखाना गिरियक जिला पटना बिहार है। यह स्थान बड़ा सुन्दर है जो आनन्द वहां आने पर प्राप्त होता है उसे केवली भगवान ही जानते हैं। हमारी वन्दना नमस्कार होवे। इस पवित्र दिन में उत्तम कार्य पूजा दान धर्मादि करने चाहिये। जूआ आदि पापारम्भ रोकना चाहिए। कृपया इस पवित्र त्योहार को दिवालिया त्योहार न बना।।

" जुआ समान इहलोक में, आन अनीत न पेखिये।
इस बिसनराय के खेलको, कौतुक हू नाहिं देखिये ॥

जैनियों को अपनी २ बहियों पर विक्रम संवत् के साथ महावीर संवत् जो अब २४ २ कार्तिक शुक्ला १ से शुरू हुआ डालना चाहिये। उसके साथ २ श्री विक्रम संवत ७८ अंक का भी लिखना चाहिये यानी इस प्रकार —

॥ ॐ ॥

नम सिद्धेभ्य ।

श्री परमात्मनेनम । श्री वीतरागायनमः ।

श्री जिनायनमः ॥

श्री ऋषभदेवायनम * * * श्री महावीरायनमः ।

४१३८ २६३०३०=०३६७ [illegible]

- श्री ऋषभ निर्वाण सं० ७८ अङ्क प्रमाण

श्री महावीर निर्वाण सं० २४५२

यों तो धर्म थोड़ा बहुत सभी साधन करते हैं परन्तु यथावत धर्म शूरवीर पुरुष ही धारण कर सकते हैं। जिनका ममत्व कनक कामिनी में ज्यादा है। वे धर्म कम धारण कर सकते हैं इस लिये लोभ और काम को जीतना योग्य है।

हमको मान कषाय के वश कोई धर्म विरुद्ध विषय या अनुचित कथन नहीं बोलना चाहिये जैन धर्म का उसूल आत्मा को निर्मल करना है। जिनेन्द्र भगवान की पूजा का अचिंत्य फल है परन्तु हमारी क्रिया यथा वत ठीक नहीं बनना इससे लौकिक में भी उच्च प्रतिष्ठा प्रगट नहीं होती है। हम ■ में बहुतों ने तो मन्दिर को स्नान स्थान Bath room समझ लिया है मन्दिर जी में तेलादि लगाकर गए स्नान किया दर्शन कीया या किसी पुजारी से अर्ध ले चढ़ा कर वापिस आगए सो ऐसे भाईयों से प्रार्थना है कि सब कार्यों का नफा नुकसान सोचना चाहिए। पुण्य का संचय ज्यादा करना चाहिए। भावों को मन्दिर में स्थिर रखना चाहिए। कई मतमतान्तर के भेद से हम जैन धर्म को तेरापंथ कहते हैं। जैनी पूजा करने से पहिले अर्हन्त भगवान की स्थापना कर लेते हैं क्योंकि वे निर्दोष देव को पूजते है। धर्म में प्रत्यक्ष और परोक्ष कथन से दो भेद हैं प्रत्यक्ष कथन को कसौटी पर परख लीजिए और परोक्ष को अनुमान से। जो केवल ज्ञान द्वारा कहा हुआ है मानलेवें। जैसे हम यह जानें कि आप अपने निज कार्य में झूठ नहीं बोलते हैं तो यह स्वयं न्याय से सिद्ध है कि आप दूसरे के कार्य में झूठ नहीं बोलते हैं। बस आप के वचन सत्य प्रमाण हैं इसी तरह धर्म के शास्त्र की चरचा जाननी यानी प्रत्यक्ष ठीक है तो परोक्ष स्वयं ठीक है।

मुनि के महाव्रत सकल व्रत होते हैं और श्रावक के १२ व्रत होते हैं यानी —

५ अणुव्रत (अहिंसा, सत्य, परस्त्री त्याग, चोरी त्याग परिग्रह प्रमाण)

३ गुण व्रत (दिग व्रत, देश व्रत, अनर्थ दंड त्याग)

४ शिक्षा व्रत (सामायक, प्रोषधोपवास, अतिथि संविभाग यानी वैयाव्रत, भोगोपभोग परिमाण)

इनका पूरा २ वर्णन जैन शास्त्रों से जानना।

श्री गोमट्टसार कर्म कांड छटे अधिकार में ८०२ वें श्लोक में कहा है:—

अर्हत्सिद्ध चैत्यतपः श्रुतगुरु धर्म संघ प्रत्यनीकः।
बध्नाति दर्शन मोह मनंत सांसारि को येन ॥

अर्थ—जो जीव अरहंत सिद्ध प्रतिमा तपश्चरण निर्दोष शास्त्र निर्ग्रंथ गुरु वीत राग प्रणीत धर्म और मुनि आदि का समूहरूप संघ—इनसे प्रतिकूल हो अर्थात इनके स्वरूप से विपरीत का ग्रहण करे वह दर्शन मोह को बांधता है कि जिसके उदय से वह अनन्त संसार में भटकता है—

अथ
चार आराधना स्वरूप
॥ लिख्यते ॥

॥ दोहा ॥

नष्ट किये रागादि जिन तिन पद हिरदय धार ।
रूप चार आराधना, कहूं स्वपर हितकार ॥ १॥

जोगीरासा सम्यग्दर्शन ज्ञान चरन तप चार अराधन जहैं ।
भव सागर से भव्य जीवन क निश्चै पार करे हैं ॥
इन संक्षेप स्वरूप बखानू सुनकर कर सरधाना ।
फिर इनके अनुसार चलो भव्य जो पाओ शिवथाना ॥ २ ॥
साचें देव सुश्रुत साचे गुरुकी दृढ़ थिदा धारो ।
ताही को जिन आगम माही सम्यग्दर्श उचारो ॥
हित उपदेशी वीतराग सर्वज्ञ देव साचे हैं ।
तत्व स्वरूप यथारथ भाषैं सोई श्रुत आछे हैं ॥ ३ ॥
विषय आशा आरंभ परिग्रह जिनके बिलकुल नाहीं ।
ज्ञान ध्यान तप लीन रहैं सतगुरु से जानो भाई ॥
संशय विपरिय अनध्यवसायजु बिन तत्वा को जानैं ।
ताही को आगम के ज्ञाता सम्यग्ज्ञानी मानैं ॥ ४ ॥
जीव अजीव करम का आश्रव बंध अरु संवर भाई ।

निर्जर मोक्ष तत्त्व ये साता सार जगत के माई ॥
दर्शन ज्ञान मई सुजीव विन जीव पच विधि जानो ।
पुद्गल धर्म अधर्म और आकाश काल युत मानो ॥ ५ ॥
शुभ अरु अशुभ नियोग जानिये कर्माश्रव दुख दाता ।
जीव साथ सबध कर्म हो सोही बध कहाता ॥
समदमादि कर कर्म रोकना सवर जानो सोई ।
क्रमवर्ती कर्मो का झरना सोई निरजर होई ॥ ६ ॥
सकल कर्म का एक साथ कर देय नाश जो ज्ञाता ।
ताकू मोक्ष कहत श्री पारग सुख अनन्त को दाता ॥
अब चारित्र व्यागाजन वरनू तेरह भेद कहाई ।
पाच महाव्रत पाच समिति है तीन गुप्ति युत भाई ॥ ७॥
दया काय छैहों की पालै सोय अहिंसा व्रत है ।
सत्य महा व्रत दूजो जानो सत्य बोलते नित है ।
बिन दीये नहि लेवें कुछ भी सो अचौर्य व्रत जानो ।
माता भगनी सम तिय समझै ब्रह्मचर्य सो मानो ॥ ८॥
चतुर बीस विधि परिग्रह में से रखैं न तिल तुप भर है ।
परिग्रह त्याग महाव्रत पचम अब पच समिति उचर है ॥
जीव रहित मयत्री को लखिकर चलै समिति ईर्या है ।
संशय रहित वचन प्रिय बोलैं भाषा समिति क्रिया है ॥९॥
एक बार निरदोष अशन लै समिति एषणा जानो ।
धरै उठावें देख यही आदान निक्षेपण मानो ॥
त्रस स्थावर जीवों को पीड़ा नाहि हावै जासे ।
खेपै मल मूत्रादि जहाही समिति क्षेपण तासे ॥ १० ॥
करै निरोध मन वचन काया भले प्रकार सुज्ञानी ।

ताही कूँ त्रिय गुप्ति जानिये अब तप कछू बखानी
अनशन ऊनोदर व्रत सख्या रस परित्याग करै है
विविक्त शयन काय क्लेश तप बाह्य छै उचरै है ॥ ११
प्रायश्चित्त विनय वैया व्रत स्वाध्याय व्युत्सर्ग
ध्यान सहित छै अभ्यन्तर तप ठाना सुन अप वर्ग
इन्द्रियादि मद नाशन भोजन त्यागे अनशन होई
अथवा न्यून भरै उर अपनो ऊनोदर तप सोई ॥ १२
भोजन कछू नियम प्रेम सें व्रत सख्या यह जानं
दुग्धादिक रस के त्यागन को रस परि त्याग सुमानो
शयन बैठना करै इकन्त विविक्त शयन याहै
देह नेह तज करै विकट तप काय क्लेश कहौ है ॥ १३
दोष दूर कू दड लेय गुरु से प्रायश्चित्त मानो
गुण गुणियों का आदर करना सो तप विनय बखानो
पूज्य जनों की सेवा करना सो तप वैया व्रत है
ज्ञानाभ्यास जु करै करावै सो स्वाध्याय सुनपहै ॥ १४
बाह्य अभ्यन्तर सग तजे व्युत सर्ग सुतप वरनाई
चित्त करै एकान्त ध्यान यह द्वादश तप सुख दाई
या प्रकार व्यवहार अराधन कही तनक मैं भाई
अब स्वरूप निश्चय कछु भाष ताहि सुनो मन लाई ॥ १
गुण अनन्त को धाम निजातम सबसे भिन्न निराला
ऐसी दृढ श्रद्धा है जाके सो सम्यक्ती आला
अजर अमर अविनाशी निरभय सुख आदिक गुणधा
जानै यों निज आतम कू सो सम्यग्ज्ञानी नामी ॥ १
निज आतम के गुण समूह में होवै निश्चल लीन
ताही को सम्यक चारित्री कहते हैं परवीना

होय अनैती इच्छा जग में तिन्हे हर्ष युत रोके ।
सोई सम्यक तपका धारी सो शिव सुख अत्र लोकै ॥१७॥
निश्चय आराधन का भाई स्वरूप यह तुम जानो ।
दोउन को उर भीतर धर के करिये निज कल्यानो ॥
इन दोउन के धारे बिन नहिं होगा तुम निस्तारा ।
भव सागरमें भवि जीवन कू इनका एक सहारा ॥ १८॥
यह सन्सार असार यामे सार कछु नाहिं दिखाई ।
मात पिता सुत तिय वैभव सब देखत देख नसाई ॥
रक्षा करै मरन से तुमरी ऐसो नाहिं दिखावै ।
बिना बात निज रक्षा कारन क्यों पर कू अपनावै ॥ १९ ॥
अनंत काल से या जगमाही दुख ही दुख तुम भोगे ।
यह जग सब दुखही का घर है या तज सुख पाओगे ।
बुरे भले जो कर्म किये है तुमने या जग माहीं ।
तिनके फल तुम इकले भोगो और भोगता नाहीं ॥२०॥
देह जीव जब जुदे न है तुमरे सुन ये भैया ।
फिर क्यों कर हो एक तुम्हारे पुत्र पितादिक मैया ॥
घृणित वस्तु की देह बनी है यामें शुच कछु नाही ।
यातें यासू प्रेम तजो अब समझ सोच मनमाही ॥ २१
मन वच काय त्रियोग चलें ते होय करम का आना ।
याहि तजो तुम मेरे भाई ये दुख देवें नाना ॥
जैसे बनै तिसी विधि आश्रव रोको मेरे भाई ।
याही के रोकन मे अपनी जानो खूब भलाई ॥ २२ ॥
अपने आप करम जो झरहैं नित सों काज न सर है।
बल पूर्वक तुम कर्म खिपाओ जो पाओ शिव घर है॥

लोक चतुर्दश राजू है या में फिरा अपारा ।
समता धार बिन सब थानक दुखही दुक्ख निहारा ॥ २३
इन्द्र नरेन्द्रादिक की पदवी मिलना दुरलभ नाहीं ।
सम्यग्ज्ञान पावना दुरलभ कह्यो श्रुतों के माहीं ॥
सोलह कारण कू तुम जानो सर्व सुक्खकी दाता ।
सम्यग्दर्शन ज्ञान चरन त्रय धर्म जानियें भ्राता ॥ २४ ॥
दया मई है धर्म धर्म दश विधि भी किया बखाना ।
वस्तु स्वभाव धर्म कहते हैं अर्थ सबन इक जाना ॥
मोह भाव कू त्याग धर्म कू पालो मेरे भाई ।
जासे शिव नगरी के राजा होवो यहा से जाई ॥ २५ ॥
नर भव पाय काज यह करना चूकै सोय गमारा ।
फिर यह समय कठिन है मिलना श्रीगुरु येम उचारा ॥
आराधन आराधा भाई जबतक दम में दम है ।
पद्मावतिकी भूल सुधारा हाथ जोर यह नमि है ॥२६॥

॥ दोहा ॥

दर्शन ज्ञान चारित्र तप, हैं सब सुख दातार ।
ये मम घट मन्दिर वसो, करकें निश्चल प्यार ॥२७

॥ इति ॥

चार आराधना स्वरूप शुभम्

राजा मधु ने समाधि मरण व मुनि अवस्था धारण की ताका कथन तथा सप्त ऋषियों का चैत्यालय विषय उपदेश श्री—पद्मपुराण (जैन रामायण) से संक्षिप्त उधृत—

श्री पद्मपुराण पर्व (८९) नवासी प्रारम्भ–संक्षेप से।

तब श्रीरामचन्द्र जी लक्ष्मण जी का तथा उनकी रानियां सीता और विसल्या का अजोध्या में राज्याभिषेक हो चुका। तब महा प्रीति से भाई शत्रुघन से कहते भए कि जो देश तुम्हें रुचे सो लेवो। तब शत्रुघन ने मथुरा मांगी। तब राम बोले कि वहां राजा मधु का राज्य है और वह रावण का जमाई है अनेक युद्ध का जीतन हारा उसको चमरेन्द्र ने त्रिशूल रत्न दिया है वह हरवधियों में सूर्य समान है उसका पुत्र लवणार्णव नाम का है दोनों महाशूरवीर हैं इस लिए मथुरा टार और राज्य लेवो। तब शत्रुघन ने न मानी और कहा कि मैं दशरथ का पुत्र नहीं जो मधु राजा को न जीतूं। इत्यादि—

और मथुरा को रवाना हुआ। तब राम बोले कि जब राजा मधु के हाथ त्रशूल रत्न न होवे उस समय युद्ध करियो। मथुरा नगरी के यमुना तट पर डेरे आ लगाए और मालुम हुआ कि राजा मधु रानियों सहित वन क्रीडा करे है आज छठा दिन है सब राज काज तज प्रमाद के वश भया है विषयों के बंधन में पडा है। मन्त्रियों ने बहुत समझाया सो काहू की बात धारे नहीं। जैसे मूढ रोगी वैद्य की औषधि न धारे। सो राजा शत्रुघन बलवान योद्धाओं के सहित अर्ध रात्रि के समय सर्व लोक प्रमादी थे और नगरी राजा रहित थी। सो मथुरा में प्रवेश करना भया और बंदी जनों के शब्द होते भए कि राजा दशरथ का पुत्र शत्रुघन जयवंत होवे। यह सुन लोगों को

महा दुख हुआ। तब उसको धीर बंधाया कि यह राम राज्य है किसी को दुख नहीं होगा। शत्रुघ्न नगर में जाय बैठा, जैसे ध्यानी कर्म नाश कर सिद्ध पुरी में प्रवेश करे। तब राजा मधु वन से महा कोप कर आया परन्तु शत्रुघ्न के सुभटों की रक्षा द्वारा नगर में प्रवेश न कर सका जैसे मुनि के हृदय में मोह प्रवेश न कर सके और त्रिशूल से भी रहित होगया तथापि महा अभिमानी मधु ने संधि न करी और युद्ध ही को उद्यमी हुआ। तब दोनों तरफ की सेनाओं में युद्ध होने लगा। शत्रुघ्न के सेना पति कृतांतवक्र ने मधु के पुत्र लवणार्णव को बाणों से वक्षस्थल को भेदा सो पृथ्वी पर आय पड़ा और प्राणांत भया तब पुत्र को देख राजा मधु कृतांतवक्र पर दौड़ा सो शत्रुघ्न ने ऐसे रोका जैसे नदी का प्रवाह पर्वत से रुके है। तब शत्रुघ्न के सामने कोई न ठहर सका जैसे जिन शासन के पण्डित स्याद्वादी तिन के सन्मुख एकांतवादी न ठहर सकें। ऐसे राजा शत्रुघ्नने मधु का सत्कार किया जैसे अपने घर कोई पाहुना आवे और उसकी भले मनुष्य भली भांति पाहुनगति करे तैसे शत्रुघ्न ने बाणों कर उसकी पाहुनगति करता भया अथानंतर राजा मधु, महा विवेकी शत्रुघ्न को दुर्जय जान आपको त्रिशूल आयुध से रहित जान पुत्र की मृत्यु देख और अपनी आयु भी अल्प जान, मुनियों के वचन चितारता भया अहो जगत का समस्त ही आरम्भ महा हिंसा रूप दुख का देन हारा सर्वथा त्याज्य है। यह क्षण भंगुर संसार का चारित्र उस में मूढ़ जन राचे इस विषे धर्म ही प्रशंसा योग्य है और अधर्म का कारण अशुभ कर्म प्रशंसा योग्य नहीं महा निंद्य यह पाप कर्म नरक निगोद का कारण है जो दुर्लभ मनुष्य देह को पाय धर्म विषे बुद्धि नहीं धरे हैं सो प्राणी मोह कर्म कर ठगाया अनंत भव भ्रमण करे है मैं पापी ने संसार असार को सार जाना, क्षण भंगुर शरीर को ध्रुव जाना, आत्म हित न किया प्रमाद विषे प्रवर्त्ता, रोग समान ये इन्द्रियों के भोग भले जान भोगे, जब मैं स्वाधीन था तब मुझे सुबुद्धि न आई, अब अन्त काल आया अब क्या करूं, घर को आग लगी उस समय तलाव खुदवाना कौन अर्थ। और सर्प ने डसा उस समय देशांतर से मन्त्राधीश बुलवाना और

पूरन्या सेरणि औपधी भगवाना कौन अर्थ इस द्विप मन विना तज निपट्टर होय अपना मन समाधान में लाऊ यह विचार वह धीर वीर राजा मधु घाव कर पूर्ण हाथी चढा ही, भाव मुनि होता भया, अरहंत सिद्ध आचार्य उपाध्याय साधुओं को मन वचन काय कर बारम्बार नमस्कार कर और अरहंत सिद्ध साधु तथा केवली प्रणीत धर्म यही मङ्गल हैं यही उत्तम हैं इनही का मेरे शरण है अढाई द्वीप विषे पन्द्रह कर्म भूमि तिन विषे भगवान अरहंत देव होय हैं ते त्रैलोक्य नाथ मेरे हृदय में तिष्ठो मैं बारम्बार नमस्कार करूं हूं अब मैं यावज्जीव सर्व पाप योग तजे, चारों आहार तजे, जे पूर्व पाप उपार्जे थे तिन की निंदा करूं हूं और सकल वास्तु का प्रत्याख्यान करूं हूं अनादि काल से इस संसार वन में जो कर्म उपार्जे थे मेरे दुष्कृत मिथ्या होवो। भावार्थ मुझे फल मत देवें। अब मैं तत्वज्ञान में तिष्ठा तजने योग्य जो रागादिक तिन को तजूं हूं और लेयवे योग्य जो निज भाव तिनको लेऊं हूं। ज्ञान दर्शन मेरे स्वभाव ही हैं सो मोसे अभेद हैं और जे शरीरादिक समस्त पर पदार्थ कर्म के संयोग कर उपजे थे मोसे न्यारे हैं देह त्याग के समय, संसारी लोक भूमि का तथा तृण का सांथरा करे हैं सो सांथरा नहीं यह जीव ही पाप बुद्धि रहित होय, तब अपना आप ही सांथरा है ऐसा विचार कर राजा मधु ने दोनों प्रकार के परिग्रह भावों से तजे और हाथी की पीठ पर बैठा ही सिर के केशलोंच करता भया, शरीर घावों कर

अति व्याप्त है तथापि महा दुर्धरवीर्य को धर कर अध्यात्म योग में आरूढ होय काया का ममत्व तजता भया, विशुद्ध है बुद्धि जिसकी, तब शत्रुघन मधु की परम शान्त दशा देख नमस्कार करता भया और कहता भया हे साधो ! मो अपराधी का अपराध क्षमा करो, देवों की अप्सरा मधु का संग्राम देखने को आई थीं आकाश से कल्पवृक्षों के पुष्पों की वर्षा करती भई, मधु का वीर रस और शान्त रस देख देव भी आश्चर्य को प्राप्त भए फिर मधु महा धीर एक क्षण मात्र मे समाधि मरण कर महा सुख के सागर मे तीजे सनत्कुमार स्वर्ग मे उत्कृष्ट देव भया। और शत्रुघन मधु की स्तुति करता महा विवेकी (मधुपुरी) मथुरा में प्रवेश करता भया। गौतम स्वामी राजा श्रेणिक से कहे हैं कि प्राणियों के इस संसार में कर्मों के प्रसङ्ग कर नाना अवस्था होय हैं इस लिए उत्तमजन सदा अशुभ कर्म तज कर शुभ कर्म करो जिस के प्रभाव कर सुख समाधि होय को प्राप्त होवे धर्म द्वारा शत्रु भी क्षण में मित्र सुख द्वारा पूज्य होवे है सोई सार जो धर्म ताहि ग्रहण करो।
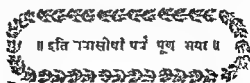
॥ इति नवासीवां पर्व पूर्ण भया ॥

सप्त ऋषि उपदेश

आगे पर्व ९० में चमरेन्द्र जिसने राजा मधु को त्रिशूल रत्न दिया था पाताल से आकर मथुरा नगरी पर कोप किया और मरी फैली।

पर्व ९१ — राजा शत्रुघ्न अयोध्या गया और जिनेन्द्र भगवान के दर्शन किये इत्यादि।

पर्व ९२ में आकाश में गमन करण हारे सप्त चारण ऋषि निर्ग्रन्थ मुनीन्द्र मथुरापुरी आये जिनके नाम सुरमन्यु, श्रीमन्यु श्री निच्चय, सर्वसुन्दर, जयवान, विनयलाल सजयमित्र, सो यह चातुर्मासिक में मथुरा के वन में वट के वृक्ष तले आय विराजे सो मथुरा में चमरेन्द्र द्वारा जो मरी फैली थी। इन सप्तऋषियों के प्रभाव कर नष्ट होगई वे चारण मुनि श्रुति केवली आकाश मार्ग होय कभी पोदनापुर कभी विजयपुर कभी अजोध्या पारणा को आवें। अर्हद्दत्त सेठ अजोध्या ने विचारा कि चातुर्मास में मुनि गमन न करें यह ऋषि पहले देखे नहीं कहां से आये ये जिन मार्ग विरुद्ध गमन करते हैं सो आहार न दिया उठ गया। तब उसकी पुत्र वधू ने आहार दिया। वे मुनी आहार लेय भगवान के चैत्यालय...

जिन शासन की प्रभावना करो घर घर जिन बिंब थापो, पूजा अभिषेक की प्रवृत्ति करो जिस करि सब शांति हो, जो जिन धर्म का आराधन न करेगा और जिसके घर में जिन पूजा न होगी दान न होयगा उसे आपदा पीड़ेगी जैसे मृग को व्याघ्री भखै तैसे धर्म रहित को मरी भखैगी। अंगुष्ठ प्रमाण भी जिनेन्द्र की प्रतिमा जिसके घर होवेगी उस के घर में से मरी यू भाजेगी जैसे गरुड़ के भय से नागिनी भाजे से वचन मुनियों के सुन शत्रुघ्न ने कही है प्रभो जो आप आज्ञा करो त्योंही लोक धर्म में प्रवर्तेंगे। अथानंतर मुनि आकाश मार्ग विहार कर अनेक निर्वाण भूमि वंद कर सीताजी के घर आहार को आए सो विधि पूर्वक पारणा कराया भई, मुनि आहार लय आकाश के मार्ग विहार कर गए और शत्रुघ्न ने नगरी के बाहिर और भीतर अनेक जिन मंदिर कराए घर घर जिन प्रतिमा पधराई नगरी सर्व उपद्रव रहित भई वन उपवन फल पुष्पादिक कर शोभित भए, वापिका सरोवरी कमलों कर मंडित सोहती भई पक्षी शब्द करते भए कैलाश के तट समान उज्ज्वल मंदिर नेत्रों को आनंदकारी विमान तुल्य सोहते भए और सर्व किसाण लोक संपदा कर भरे सुख सो निवास करते भए गिरि के शिखर समान ऊंचे अनाज के ढेर मानों मुनि साहते भए स्वर्ण रत्नादिक की पृथ्वी में विस्तीर्णता होती भई सकल लोक सुखी राम के राज्य में देवों समान अतुल विभूति के धारक धर्म अर्थ काम विषे तत्पर होते भए शत्रुघ्न मथुरा में राज्य करें राम के प्रताप से अनेक राजाओं पर आज्ञा करता सोहे। इस भांति मथुरापुरी का ऋद्धि के धारी मुनियों के प्रताप कर उपद्रव दूर होता भया। जो यह अध्याय बांचे सुने सो पुरुष शुभ नाम शुभ गोत्र शुभ साता वेदनी का बंध करें जो साधुओं की भक्ति विषे अनुरागी होय और साधुओं का समागम चाहे वह मन वांछित फल को प्राप्त होय इन साधुओं के संग पायकर धर्म को आराध कर प्राणी सूर्य से भी अधिक दीप्ति को प्राप्त होय हैं।

॥ इति बानवेंवां पर्व सम्पूर्णम् ॥

प्रिय सज्जनो, पंडितो! इस प्रकार शास्त्र ग्रन्थ धर्म की चरचा सुन यथावत श्रद्धान करेंगे । इस कथन में जिन बिम्ब घरर थापने का प्रसंग पाय मैं अल्प बुद्धिवाला दृष्टांत देता हूं कि नगर जैपुर में करीब इस प्रकार ३०० चैत्यालय हैं । मंदिर और चैत्यालय में कुछ फर्क नहीं है। चैत्यालय अनादि कल्याणकारी शब्द है यानी चैत्य—आत्मा, आलय—जगह, भावार्थ, आत्म प्रदर्शन—प्राचीन समय में मन्दिर गृह को कहते थे—जिन "मन्दिर" आज कल चैत्यालय का सूचक है—

श्रीयुत पद्मनन्द आचार्य कृत पद्मनन्द पच विंशति शास्त्र अध्याय ७ श्लोक २२ में लिखा है कि "कुंदुरी के पत्र बरोबर ऊंचा चैत्यालय और जौ बराबर ऊंची जिन प्रतिमा जे करावें हैं तिन्के पुन्य की महिमा कौन वर्णन कर सके और तीर्थंकर पद का बन्ध करे है । इत्यादि —

इसी दृष्टांत पर हमारे पिताजी श्रीमान बाबू चतुर्भुजजी गवरमेन्ट पेन्शनर हाथरस, ने श्री महावीर दिगम्बर जैन मन्दिर सरे बाजार निजी दो दुकानें तोडकर निर्माण सम्वत २४४६ में किया है।

॥ स्वाध्याय ॥

प्रिय सज्जनो ! अब उन भाइयों भगवान परमात्मा की वाणी के बारे में एकाग्रचित्त हो सुनिये—यह वाणी ही मुख्य कर धर्म मार्ग दिखाने वाली है।

श्रीमद् भगवान परमात्मा का जो धर्मोपदेश है उसको सरस्वती, सूक्त, आज्ञा भगवत वाक्य, देव, शास्त्र, आमनाय, सूत्र, प्रवचन, श्रुत जिनवाणी या जिनवाणी माता शारदादि कहते हैं। उस वाणी को गणधरों ने जो चार ज्ञान (मति, श्रुति, अवधि और मनःपर्यय) के धारक होते हैं मिलकर रचना की है। जिन पन्नों पर यह वाणी लिखी गई है उसको शास्त्र भी आगमादि कहते हैं। उसके पठन, सुनन उपदेश करने, चिन्तवन करने तथा मनन करने को स्वाध्याय कहते हैं। यह वाणी अमृत ही है। इसके पाठी हो जाने से 'अमर' हो जाता है यानी जन्म मरण रहित हो जाता है। अमर होने का तीन लोक में और कोई दूसरा उपाय नहीं है जब तक इसका पठन होता है कर्मों की निर्जरा और पुण्य संचय होता है। उस स्थान पर सम्यग्दृष्टी देव देवांगना भी सुनने का आते हैं यह शास्त्र बताया है और मुझ मन्दबुद्धि को भी इसका कुछ परिचय हो चुका है। तीन लोक का हाल घर बैठे मालुम होता है। लौकिक और पारमार्थिक मार्ग अच्छी तरह दृश्य पड़ता है। श्री मूलाचार जी ग्रंथ में लिखा है कि जो जीव स्वाध्याय करता है वह संसार अंध कूप में नहीं पड़ता है जैसे डोरा सहित सूई नहीं खोती है। आचार्य उपाध्याय साधु मुनीश्वर भी नित्य स्वाध्याय करते हैं। श्री आदि पुराणजी पर्व २० श्लोक ३५ पत्र २१८ में लिखा है 'जिन सूत्र सो तत्व जानिन करि आराधिबे योग्य है। जिन शासन अनादि निधन कहिए आदि अर अंत नाहीं और सूक्ष्म कहिए अति सूक्ष्म है चरचा जा विषे और सत्य स्वरूप का प्रकाशक है और पुरुषार्थ कहिए मोक्ष ताके उपदेश तें जीवन का हित है जिन कहिए अति प्रबल है। अर

ग्रन्थ कहिए काहू करि जोरा न जाय । अमित कहिए अक्षर है ताका पार प्रभु ही पावै । इस जिनवाणी के चारों अधिकारों को यानी धवल, जयधवल, महाधवलादि की रचना जेठ सुदी ५ के दिन की गई है यह दिन श्रुत पंचमी नाम से विख्यात है । इन ग्रन्थों के दर्शन मूडबिद्री में होते हैं । आज कल इनके पाठ करने की योग्यता किसी में नहीं है । और उन ग्रन्थों को भूतबलि और पुष्पदन्त मुनियों ने धरसेन मुनि जो गिरिनार के शिखर चन्द्रगुफा के वासी के उपदेश से रचे जेठ सुदी ५ के दिन रच कर प्रतिष्ठा की । ऐसे महान ग्रन्थों को पढ़ श्री नेमिचन्द्र सिद्धांत चक्रवर्ती स्वाध्याय कर रहे थे उस वक्त मंत्री चामुण्डराय के आने पर उन महान ग्रन्थों को बन्द कर दिया और श्री गोमट्टसार इत्यादि ग्रन्थ रचे । इन के दर्शन से जीव ज्ञान को प्राप्त करेगा और प्राचीन रत्न मई प्रतिमाओं के दर्शन हैं मानों तीन लोक की विभूत वहीं पर इकट्ठी है । इस लिए हर एक को वहाँ जाकर दर्शन करना चाहिए । यात्रा पुस्तक हमारे यहां से कुछ नियमों पर बिना मूल्य मिलती है ।

उस दिन शास्त्रों को बाहर मेज के ऊपर विराजमान कर धूप पूजादि करनी चाहिए । हम प्रगट किए बिना नहीं रह सके कि शहर हाथरस में जिनवाणी की सजावट और पूजा श्रुत पंचमी को एक महान आदर्श रूप में होती है जिस के लिए जैन समाज तथा ला० मिश्रीलालजी सोगानी मंत्री सरस्वती भंडारको कोटि धन्यवाद है —जो और उस दिन व्रत करते हैं महापुण्य उपार्जन करते हैं । परंपराय स्वाध्याय के प्रसाद से मोक्ष के पात्र बनते हैं ॥ जिनवाणी की रक्षा करना हमारा परम कर्तव्य है ।

जिनवाणी रक्षा ।

श्रीयुत अमोलकचंद जी मंत्री सरस्वती भंडार विभाग श्रीमती दिगम्बर जैन मालवा प्रांतिक सभा ने इस विषय में जो

लेख विवरण १२—१३ वर्ष में दीया है उसका संक्षेप यहां प्र
करता हूं—मंत्री जी लिखते हैं।

"आज मुझे बड़ा हर्ष है मेरे हृदय में आनन्द की ल
उठ रही है मेरा भाग्योदय है कि सरस्वती सेवा का कार्य प्रा
हुआ है। जीव अनादि से भ्रमण कर रहा है और चतुर्गति रू
संसार में जन्म मरण के दुःख उठा रहा है। इस को शीतल
देने वाला एक जिनवाणी सरस्वती ही है। हिताहित मार्ग दिख
कर स्व, पर, भेद विज्ञान, पैदा करती है। वस्तु स्वरूप को यथार्थ
कहती है जैन धर्म का मूल जिनवाणी है। इस की रक्षा में जैन
धर्म की रक्षा है जिनवाणी की उन्नति में जैन धर्म की उन्नति है।
यदि आप यह जिनवाणी न होती तो कोई नहीं जान सकता था
कि जैन धर्म क्या है संसार और मोक्ष क्या है? आचार्यों ने
कठिन परिश्रम से जिनवाणी के ग्रन्थ निर्माण कीये और उन्हीं
के हमको दर्शन और उपदेश आज मिल रहा है लेकिन दुःख की
बात है कि इस में से भी हमारी अज्ञानता और आपसी फूट के
कारण अनेक स्थानों के सरस्वती भंडारों के बहु संख्यक ग्रन्थ
जीर्ण शीर्ण होकर चूहों दीमकों के ग्रास बन कर नष्ट हो रहे
हैं। कितने ही दूसरी भाषाओं में होने से हम से छूट रहे हैं। क्या
यह सुनकर आप को दुःख न होगा? अवश्य होगा। भाइयो!
जरा ध्यान दो, यदि जैन धर्म की रक्षा और उन्नति के मूल ये ग्रन्थ
ही न रहेंगे। तब यह आप का धर्म कहां सुनाई पड़ेगा। कहां
आप की आम्नाय और कहां आपका पंथ रहेगा। इस लिए यदि
आप सच्चे धर्मोन्नति के इच्छुक हैं तो जहां जहां ग्रन्थ आलमा
रियों में बंद रहकर जीर्ण शीर्ण हो रहे हैं, उन ग्रन्थों को निकल
वाइए, बाहर धूप दिखाइए यदि जीर्ण होगए हों तो उनकी
प्रति दूसरी कराइए। कनाटकी आदि दूसरी भाषाओं में हों तो
हिंदी लिपि कराइए। इत्यादि बातों का प्रबंध करना आपका हमारा
परम कर्तव्य है", समाप्त।

प्रिय सज्जनो! मंत्री जी के बहु मूल्य वाक्यों को सुन
कर आप बहुत प्रसन्न हुए होंगे। श्रीमान धावीर राय बहादुर
सर नाईट सेठ हुकमचंद जी सभापति तथा श्री० ला० भगवानदास

श्री जैन जाति भूषण महामन्त्री श्री दिगम्बर जैन मालवा प्रांतिक सभा बड़नगर (मालवा) राजपूताना को कोटिशः धन्यवाद है कि सभा और औषधालय द्वारा भारत वर्ष में अधिक लाभ पहुंचा रहे हैं।

आशा है कि जहां तहां ऐसे गुणों की दशा को यहां के सज्जन २ पच गुरु रक्षा करेंगे। मालवा की सभा के नियम पर भी सर्व अवश्य ध्यान देने की कृपा करेंगे।

जिनवाणी की रक्षा और स्वाध्याय करना कराना हम जैनियों का परम कर्तव्य होना चाहिए। इन कार्यों में मन वचन काय और धन लगाना महा पुण्य और यश का कारण है इन कार्यों में धन लगाना मानो साथ में लेजाना है। कोठरियों में, आलय में, सन्दूकों में जिनवाणी की रक्षा ठीक २ नहीं होती है इस लिए हमको बड़े सज धज से बड़ी २ आलमारियों में विराजमान रखना चाहिए जहां हवा लगती रहे और दर्शकों को दर्शन मिलते रहें तथा पूजादि भी होती रहे। जीर्ण शीर्ण कर सदा के लिए जलांजलि न दीजिए। हृदय फटा जाता है इस महा अविनय को कृपया रोक कर प्रबन्ध करिए ज्ञान के विनय से केवल ज्ञान का बंध है। ऐसे अलमारियों की चाबी एक स्थानीय अप्रमादी विनयवान भाई के पास रहना चाहिए ताकि वह सरस्वती का सर्व कार्य करे और स्वाध्याय करने वालों का नम्बर बढ़ावे। सूची रजिस्टर वगैरह सब रखनी चाहिए शास्त्रजी हमारे गुरुओं की जगह पर हैं। क्यों कि गुरुओं के दर्शन कठिन हो गए हैं।
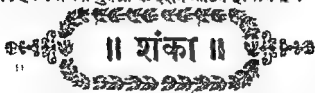
॥ शंका ॥

यदि कोई शंका करे क्या जैनी निगुरे हैं? इस का समाधान इस प्रकार है—निगुरा उसको कहते हैं जो गुरु को नहीं मानता हो। जैनी लोगों के गुरुओं का स्वरूप पहले वर्णन कर चुके हैं जिन के गुण सर्वोत्कृष्ट होते हैं और उनका अभाव नहीं।

श्रीगुरु के प्रसाद कर श्रात्मा ते जीव अनन्त सुख में प्राप्त हो गए और होवेंगे। काल दोष से यदि वे दृष्टि में पड़े तो अन्य उनको अगर नहीं माने जा सकते हैं जैसे हंसा के न दीखते हुए अन्य पक्षी को हम कौं पक्षी नहीं हो सकते हैं। इस का आप सुख पाय कर सकते हैं। जिस जीव में सिंह के गुण होंगे वह 'सिंह' कहा जा सकता है। केवल 'सिंह' नाम रखने से सिंह नहीं हो सकता है। एक गुरु आज्ञा का अविनय करना अनन्त दुख का कारण है और ऐसे दोष दृष्टि एक दूसरे को न मानने से प्रमाद का पाप लगता है तात कल्याण निमित्त धर्म पदेश देना आवश्यकीय है। इस जीवन का केवल धर्म ही सहाय है धर्म न उपार्जा हो और बहुत काल तक जीने और सुख की इच्छा करे, तो कैसे बने। कर्मों की विचित्र गति है। क्षण में जीव पर्वत पर क्षण में खांड़े में क्षण में एक रस से दूसरे रस में, कभी विरस इत्यादि में आता है। देखिए हमारी अवस्था कैसी हो रही है, प० भूधरदास जी कहते हैं ——

> जोई दिन कटे सोई आयु में अवश्य घटे।
> बूंद २ बीतें जैसे अंजुली को जल है॥
> देह नित हीन होय नैन तेज हीन होय।
> जोवन मलीन होय हीन होत बल है॥
> हूके जरा वेरी तके अन्तक अहेरी आये।
> परभौ नजीक जाय नरभौ निपल है॥
> मिलके मिलापी जन पूछत कुशल मेरी।
> ऐसी या दशा में मित्र काहे की कुशल है॥

यह परिग्रह विनाशीक महा दुख का कारण है। देह अपवित्र है। ज्ञान रहित अविवेकी इस तन से अति राग करता है। यह शरीर सम्यग्दर्शन ज्ञान चारित्र से शुद्ध होता है और मनुष्य देवादि द्वारा पूज्य होता है। जीव भोगों से तृप्त नहीं होता। ज्यों २ भोग करता है त्यों २ लालसा बढ़ती है जैसे

अग्नि में ज्यों २ लकड़ी डालोगे त्यों २ ज्वाला बढ़ेगी। यह जीवरूपी राजा कुबुद्धि रूपी स्त्री सहित रम है अर मृत्यु याकूँ अचानक ग्रस्या चाहे है। मनरूपी हस्ती, रूप वन विषै क्रीडा करै है। ज्ञानरूप अंकुश तें याहि बस कर, वैराग्यरूपी गज थम सूँ विवेकी बांधे हैं। चित्त के मेरे चंचलता धरे है। तातें चित्त कूँ वासि करना योग्य है। **चित्त कू वसि करना स्वाध्याय से होता है?**

विचारनीय बात है कि मनुष्य पर्याय अति दुर्लभ है इसी से आत्म कल्याण होसकता है आज हमारे पास सब प्रकार की सामग्री मौजूद है धर्म अच्छी तरह साधना चाहिये वरना एक दिन ऐसा होगा कि न हमारे पास वह सामग्री रहेगी और सब कुटुम्बी व मित्रजन न्यारे २ होजावेंगे। इस्से संसार से विरक्त हो धर्म साधन करना चाहिये। यह मनुष्य पर्याय रूपी रत्न को संसार रूपी समुद्र में मत फेंको। हमको स्वाध्याय करना चाहिये। श्री आदि पुराणजी में लिखा है।

(श्लोक १९८ से २०० तक पर्व १९)

ए बाह्याभ्यंतर बारह प्रकार के तप तिन विषै स्वाध्याय समान तप न पूर्वे भया न अब है न आगे होयगा। स्वाध्याय विषै रति निश्चल संजमी जितेन्द्री होय है। स्वाध्याय करि बुद्धिमान विनय करि मंडित समाधान रूप होय है।

न स्वाध्यायात्परं तपः।

अर्थात स्वाध्याय के समान कोई तप नहीं है। जबतक स्वाध्याय होती रहती है पुण्य का संचय और पाप का क्षय होता रहता है। अक्सर देखा जाता है कि हमारे बहुत से

भाई कुछ थोड़ासा जानकर स्वाध्याय छोड़ देते हैं और कहते हैं जो कुछ जानना था जान लिया अब स्वाध्याय की जरूरत नहीं। हम पंडित भूदरदासजी की निम्न लिखित चौपाई का स्मर्ण उन्हें दिलाते हैं—

जानन जोग लियो हम जान। यहा हमारे दिढ़ सरधान ॥
यही सही समकित को अङ्ग। काहे करें और श्रुत सङ्ग ॥
जो तुम सीके लीनों जान। तामें भी है बहुत विनान ॥
तातें सदा उद्यमी रहो। ज्ञान गुमान भूलि जिन गहो ॥

प्रिय पाठको! यदि आप नित्य दिन रातें यानी २४ घंटे के अन्दर आधा पत्र भी पढ़लेंगे तो सालभर में २०० पत्र यानी एक छोटे ग्रंथ की स्वाध्याय हो सकती है जैसे एक २ बूंद से कर तालाव भरजाता है। स्वाध्याय से अचिंत्य लाभ है - नुकसान किसी प्रकार का नहीं है। हम आपके खाने पीने में कोई बाधा नहीं डालते हैं।

भगवत प्रार्थना।

आगम अभ्यास होहू सेवा सर्वज्ञ, तेरी।
सङ्गति सदीव मिलौ साधरमी जनकी ॥
सन्तन के गुन को बखान यह बान परौ।
मेटो टेव देव! पर औगुन कथन की ॥
सबही सों ऐन सुखदैन मुख बैन भाखौं।
भावना त्रिकाल राखौं आतमीक धनकी ॥
जौलों कर्म काट खोलों मोक्षके कपाट तौलों।
ये ही बात हूजो प्रभु पूजो आस मनकी ॥

शरीर में क्षुधा भोगादि रोग हैं। एक दफे तृप्त होने में शान्ति नहीं होती है। परन्तु मनुष्य पर्याय उच्च कुल, श्रावक कुल, साधर्मीयों की सत सङ्ग मुश्किल है। जिनवाणी मात्र नय से वर्णन होती है। जैसे दूध बिलोने वाली एक हाथकी रस्सी ढीली करती है मगर छोड़ती नहीं फिर दूसरे हाथ की रस्सी ढीली करती है इस प्रकार की क्रिया से मक्खन निकाल लेती है। उसी प्रकार स्याद्वादी सम्यग्दर्शन से तत्वस्वरूप को अपनी ओर खींचता है, सम्यग्ज्ञान से पदार्थ के भाव को ग्रहण करता है और दर्शनज्ञानकी आचारणक्रियामें, सम्यगचारित्र से परमात्म पद के प्राप्ति की सिद्धि करता है। भावार्थ जिस नय के कथन का प्रयोजन द्रव्य से हो उसे द्रव्यार्थिक और जिसका प्रयोजन पर्याय से ही हो उसे पर्यार्थिक नय कहते हैं इन दोनों नयों से ही उसे वस्तु के यथार्थ स्वरूप का साधन होता है।

नय वस्तु के एक देश का ज्ञान वाले ज्ञानको कहते हैं मुख्य नय, दो प्रकार के हैं। निश्चय और व्यवहार। अथवा उपनय वस्तु के असली अंश को ग्रहण करना उसे निश्चय नय कहते हैं। जैसे मिट्टी के घड़े को मिट्टी का घड़ा कहना। किसी निमित्त के वश से एक पदार्थ को दूसरे पदार्थ रूप जानने वाले ज्ञान को व्यवहार नय कहते हैं। जैसे मिट्टीके घड़े में घी के रहने से घी का घड़ा कहना। निश्चय नय के दो भेद द्रव्यार्थिक दूसरा पर्यायार्थिक। जो द्रव्य अर्थात सामान्य को ग्रहण करे उस द्रव्यार्थिक नय कहते हैं। जो विशेष को (गुण अथवा पर्याय को) विषय करे उसे पर्यायार्थिकनय कहते हैं। द्रव्यार्थिक नय के तीन भेद—नैगम संग्रह, व्यवहार। पर्यायार्थिक नय के चार भेद—ऋजुसूत्र, शब्द, समभिरूढ, और एवंभूत। विशेष ज्ञान जैन

के कारण मनु य जन्म व्यर्थ व्यतीत हो रहा है" "गया वक्त हाथ आता नहीं" आत्मा के हित करने के लिये जिनवाणी ग्रहण करने को कुछ प्रतिज्ञा (यम = यावज्जीवन, नेम = कुछ काल पर्यंत) करो सदैव ज्ञानोपयोग रहने से नाश कर्म प्रकृति का बंध होता है।

प्रमादी रहने में बड़ा हानि होती है प्रमाद से ■ प्रकृतियां का अर्थात् अस्थिर, अशुभ, असाता वेदनीय, अयश कीर्ति, अरति और शोक का ■ ध होता है पस प्रमाद और कुसंगति तत्काल छूट कर विनयी हो धर्म धारण करना योग्य है बालकों स्त्रीयों को विद्या अभ्यास करना जरूरी है। (समाप्त) श्री जिनसेनाचार्य ने श्री पद्मपुराण में कहा हैकि जो कुछ नेम या यम जीव प्राप्त कर लेता है वही उसका सच्चा रत्न है। न्या याय के प्रसाद से असंख्य जीव कुगति से बच गये हैं यह बात शास्त्रों से भली भांति जानी जा सक्ती है:—

नेम या यम करने से जीव ब्याप्याप से नहीं छूटता है क्या कि नेम या यम भङ्ग करने का बड़ा पाप है इस पाप को थोड़ा चाहि न भी बहुत बुरा समझा है इस लिए कोई भी यम व नेम करते समय सब बातों का विचार करले और "सूतक पातक हारी बीमारी सफर इत्यादि (स्त्रियों को इसके अतिरिक्त स्त्रीधर्म जापा वगैरहः) में छूट रखलेना उचित है। विपति व कठिनसमय में सावधान रहना यही पुरुषार्थ है और जांच का भी यही समय है।

सत्य जानिए मेरा लेख ऐसे है जैसे बालक चंद्रमा को पकड़ना चाहे परन्तु मैं भक्तिवश जिनवाणी की स्तुति व गुणानुवाद करूं ■ ।

हम को नेत्रों से दर्शन, मुख से जिनेन्द्र गुणानुवाद स्वाध्याय करना, कानों से धर्मध्वनि सुनना हाथों से धर्म कार्य दान करना; मन से धर्म भावना, करना चाहिए। मेरे अंतरङ्ग यह मङ्गलीक भावना दृढ़ रहे और जीवमात्र दुख से छूटें और सुख प्राप्त करें।

महिमा जिनवर वचन की, नहीं वचन बल होय ।
भुजबल सों सागर अगम, तिरे न तीरहि कोय ॥
इस असार ससार में, और न सरन उपाय ।
जन्म जन्म हूजो हमे जिनवर धर्म सहाय ॥

॥ भजन ॥

(१)

करो कल्याण आतम का भरोसा है नही दम का ।
ए काया कांच की शीशी, फुल मत देख कर इसको,
छिनक में फूट जावेगी बबूला जैसे शबनम का ॥करो०॥
ए धन दौलत मकां मँदिर जो तू अपने बताता है,
नहीं हरगिज कभी तेरे छोड़, जँजाल सब गम का ॥ करो० ॥
सुजन सुत नार पितु मादर सभी परिवार अरु बिरादर,
खड़े सब देखते रहेंगे कूच होगा जभी दमका ॥ करो० ॥
घड़ी अरथी ए जग रूपी फँसे मत जान कर इस में,
कहें चुन्नी समझ मन में सितारा ग्यान का चमका ॥करो०॥

* सम्पूर्ण *

(२)

पद ॥ परदा पड़ा है मोह का आता नजर नहीं ।
चेतन मेरा सरूप है तुझ को खबर नहीं ॥ १ ॥ परदा०
चारों गतिमें मारा फिरै बेजार रातदिन, आपमेंआप आपको
समझता मगर नहीं ॥ २ ॥ परदा पड़ा है मोह का०
तज मन विकार, धारले अनुभव, सुचेत हो। निज
पर विचार, देख जगत तेरा घर नहीं ॥ परदा पड़ा० ॥
तू अब स्वरूप शिव स्वरूप अरूप है। विषियों के

मद्र में होवो कदर नहीं। परदा पड़ा है मोह का० ॥ चाहे तो कर्म काट तू परमात्मा बन, अफसोस है कि इस पर भी करता नजर नहीं ॥ परदा पड़ा है मोह का०॥ निज भक्ति को पहिचान समझ तू न्यामत। आलस में पड़ रहन म होना गुजर नहीं॥ परदा पड़ा है मोह का० ॥

जिन सेवक—

॥ संयम ॥

पाचों इन्द्रीया और छटे मन का दमन करना, वैराग्य भावना, बारह भावनाओं का चिन्तवन करना, संसारी कार्यों में विरक्तता उपआवना सो संयम है।

बारह भावना (भैयालाल कृत)

चौपाई

पंच परम गुरु वंदन करूं। मन वच भाव सहित उर धरूं ॥
बारह भावन पावन जान। भाऊं आत्म गुण पहिचान ॥१॥
थिर नहीं दीखत नयनों वस्त। देहादिक अरु रूप समस्त॥
थिर विन नेह कौन से करूं। अथिर देख ममता परिहरूं ॥२॥
अशरण तोहि शरण नहीं कोय। तीन लोक में दृग धर जोय॥
कोई न तेरा राखन हार। कर्मन वस चेतन निरधार ॥३॥
अरु संसार भावना येह। पर द्रव्यन सों कैसो नेह॥
तू चेतन, ये जड़ सरवंग। तातें तजो परायो संग ॥४॥
जीव अकेला फिरे त्रिकाल। ऊरध मध्य भवन पाताल ॥
दूजा कोई न तेरे साथ। सदा अकेला भ्रमे अनाथ ॥५॥
भिन्न सदा पुद्गल से रहे। भर्म बुद्धि सों जड़ता गहे॥
वे रूपी पुद्गल के खंद। तू चिन्मूरति सदा अबंध ॥६॥
अशुचि देख देहादिक अङ्ग। कौन कुवस्तु लगी तो संग॥
अस्थि मांस रुधिरादिक गेह। मल मूत्रनि लख तजो सनेह ॥७॥
आश्रव पर सों कीजे प्रीति। ताते बंध बढे विपरीत ॥
पुद्गल तोहि अपन यो नाहिं। तू चेता, ये जड़ सब आहिं ॥८॥

सम्वर पर को रोकन भाव । सुख होवे को यही उपाय ॥
आवें नहीं नव जहाँ कर्म । पिछले रुक प्रगटे निज धर्म ॥९॥
थिति पूर्ण ह्वै खिरखिर जाय । निर्जर भाव अधिक अधिकाय ॥
निर्मल होय चिदानन्द आप । मिटे सहज पर सङ्ग मिलाप ॥१०॥
लोक माँहि मेरो कुछ नाहिं । लोक अन्य तू अन्य लखाहि ॥
यह सब षट द्रव्यन को धाम ॥ तू चिन्मूरति आतमराम ॥११॥
दुर्लभ पर को रोकन भाव । सो तो दुर्लभ है सुन राव ॥
जो तेरे है ज्ञान अनन्त ॥ सो नहीं दुर्लभ सुनो महन्त ॥१२॥
धर्म स्वभाव आप ही जान । आप स्वभाव धर्म सोई मान ॥
जब यह धर्म प्रगट तोहि होइ । तब परमातम पद लख सोई ॥१३॥
येही बारह भावन सार । तीर्थंकर भावें निर्धार ॥
होय विराग महाव्रत लेय । तब भव भ्रमण जलांजलि देय ॥१४॥
भैया भावो भाव अनूप । भावत होय तुरत शिव भूप ॥
सुख अनन्त बिलसो निशि दोस । इम भाखो स्वामी जगदीश ॥१५॥

* दोहा *

प्रथम अथिर अशरण जगत, एक अन्य अशुचान ॥
आश्रव सम्वर निर्जरा, लोक बोध दुलभान ॥ ॥१६॥

॥ तप ॥
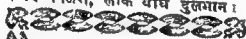
निश्चय से देखिए तो सर्व जाति म हुए हे । तपनि के भेद बहुत है सो शास्त्रजी से मालुम करना । तप दो प्रकार के होते हैं एक अन्तरङ्ग दूसरा बहिरङ्ग । सर्व देश मुनि के और एक देश श्रावक के होते हैं । कुछ संक्षेप में मुनि के तपनि का वर्णन श्री गुरु के स्वरूप में आया है । तप और नेम में कुछ भेद नहीं है । जैसे किसान खेत की बाड से, हौजवान डाट से हौज के पानी की, रक्षा करता है । इसी तरह मुनि श्रावक अपने धर्म की यम नेम रूपी बाड़ डाट लगाकर, रक्षा करते हैं और तप कर कर्मो की निर्जरा करते हैं ।उनका रत्न है । लौकिक कार्य भी नियम से होते देखिए कार्य को अवश्य यम नेम चाहिए ।

जितने इस प्रकार नेम कीये जावें सो सब तप के भेद हैं । श्रावकों को १७ नियम लिए करने चाहिए—१ भोजन २ षट्रस (दूध दही तेल घी मीठा नौन) ३ पान (पीने)की वस्तु ४ कुङ्कुमादि विलेपन सुगंध तेल लेपादि ५ पुष्प—फूल ६ तांबुल—पान सुपारी आदि ७ गीत—संसारी गान नाटकादि ८ नृत्य—संसारी नृत्य ९ ब्रह्मचर्य—काम सेवन १० स्नान ११ वस्त्र १२ भूषण १३ वाहन हाथी घोड़ा बैल आदि १४ शयन—शय्यादि १५ आसन चौकी कुरसी फर्श आदि १६ सचित (हरी का प्रमाण) १७ अन्य वस्तु (दिशाओं का प्रमाण)—यह बारहवां नियम ग्यारहवीं स्थूल भोगोपभोग परिमाणव्रत रूपी प्रतिमा धारी श्रावकों को करना चाहिए । इन जैनियों को ऐसे हर समय याद रखने योग्य है ।

सत्त्वेषु मैत्रीं गुणिषु प्रमोदं, क्लिष्टेषु जीवेषु कृपा परत्वम् ।
माध्यस्थ भाव विपरीत वृत्तौ, सदा ममात्मा विदधातु देव ॥

O Lord ? make myself such that I may have love for all beings, pleasure at the sight of learned men unstinted sympathy for those in trouble, and tolerance towards those who are perverse y inclined

---

नोट—मध्यस्थ भावना उस भाव को कहते हैं जैसे एक अनजान पुरुष हो जिस से न तो मित्रता है न शत्रुता है—

स्वाध्याय करना सो अंतरंग तप है । चिदानंद चैतन्य के गुण अनंत उर धारि—क्रोधादि को इस प्रकार जीत दश धर्म उपार्जन करै ।

क्रोध	का	अभाव	क्षमा	से	
मान	"	"	मार्दव *	"	*मान कषाय रहित
माया	"	"	आर्जव +	"	+कपट छल रहित
असत्य	"	"	सत्य	"	

लोभ का अभाव शौच* „ *पवित्रता उज्जलता
कषायन „
५ मन अहिंसादि } संजम+ +एक देश सकल देश
इच्छा „ „ तप „
परम ममता „ „ त्याग „
परिग्रह त्याग
गृहस्थ की भावना } „ „ आकिंचन „
वेदन (स्त्रीपुरुष नपुंसक,
का अभाव यानी आत्म
स्वरूप म प्रवृति } „ „ ब्रह्मचर्य „

दान चार प्रकार के हैं यथा आहार औषधि, शास्त्र और अभय। (उत्कृष्ट, मध्यम और जघन्य से कई भेद हैं)

यह नियम द्रव्य द्वारा या सामग्री से पाला जा सक्ता है। हमारे आचार्यों ने शास्त्र जी में हम को हमारी मासिक आमद में से चौथाई हिस्सा दान करने का उपदेश दिया है जो कोई ऐसा करे वह तो उत्कृष्ट पुरुष है बहुत से बड़े २ धर्मात्मा अपनी आमद में से आधा या ज्यादा धर्म में लगा देते हैं उनके पुण्य को केवली भगवान ही जानते हैं। जब ऐसे भाव या निमित्त न हो तो भी शक्ति को न छिपा कर महावारी मुकर्रर करे या रुपये पीछे कुछ बांधकर दान द्रव्य एकत्र करना चाहिए। और जहां जहां उचित स्थानों में जरूरत हो लगाता रहे। इस तरह पर हम एक समय में बड़ी तादाद भी लगा सकेंगे और हमको कोई कठिनता मालुम न होगी। पारमार्थिक लाभ के अतिरिक्त लौकिक लाभ जैसे दानवीर, सेठ साहूकार धर्मात्मा कुल भूषणादि पद भी लग जाते हैं जिसका यास्तव में सुधर्य उसका

पारमार्थिक भी जरूर सुधरेगा उन्हीं का जन्म और द्रव्य सफल है। परभव में द्रव्य लेजाने का एक यह 'दान' सुगम उपाय है। हमको न्याय पूर्वक द्रव्य कमाना और खर्च करना चाहिए। लक्ष्मी रूपी द्रव्य में लोभराग होने से तिर्यंच गति का बंध पड़ना सम्भव है। आपने उदाहरण भी बहुत से सुने होंगे कि "फलाने के पास बहुत द्रव्य था मरकर सर्प हुआ"। यदि आप द्रव्य ही साथ में रखना चाहते हैं तो धर्म में लगाइए। निदान नहीं करना यानी मेरा फलाना कार्य सिद्ध हो तो यह करूं ऐसी कल्पना नहीं करनी।

हर शहर में भाइयों को अभयदान का निमित्त बनाना चाहिए।

यदपि साधारण तौर पर उपर्युक्त चार दान हैं परन्तु श्री आदि पुराणजी पर्व ३७ में और रूप में चार दान इस प्रकार कहे हैं सोई कोई विरोध न करना करुणादान, सीताजी के किमिच्छादान का कथन समाधि मरण पाठ से भली भांति जाना जा सक्ता है।

दयादान, पात्रदान, समदान, अन्वयदान।

दयादान—दया सहित जीवनि के समूह विषै अनुग्रह करना, मन वचन काय की शुद्धता करि सकल का उपकार करना काहू कू भय न उपजावना, दुखित भूखित जीवनि कू पोषना इसे दयादत्ति भी कहते हैं। (करुणा दान भी यही है)

पात्रदान—महा तपोधन महामुनि की अरचा करके, पडगाहनादि नवधाभक्ति करि तिनि कू आहारादिक दान। अधिक

स्त्री समाज से प्रार्थना

प्रिय माताओ व बहिनो ?

मैं अपने इष्टदेव का स्मरण कर आपके सन्मुख कुछ लेख द्वारा प्रकाश करता हूं कि यद्यपि हर स्थान पर स्त्रियां धर्म साधन करती है तथापि जैसा करना उचित है वैसा कम नजर आता है इसलिये मेरा विचार यह है कि आप बहिनों की सेवा करूं। मुझमें ज्यादा ज्ञान नहीं है परन्तु जिन शासन भक्ति रस कार्य करने को उद्यमी हुई हूं। सन्सार में उपकार और अपकार दो ही है। उपकार नाम भलाई और अपकार नाम बुराई। देखने में अक्षरों का थोड़ासा ही अन्तर है। जो अपना और दूसरों का भला करते है उन्हीं का जीवन सफल है। इस मनुष्य पर्यायको देव भी तरसते है।

जैन समाज के आचार सुधार का एक स्त्री समाज भी निमित्त है जैसे गाड़ी दो पहियों के बिना नहीं चल सक्ती है।

हम आठ चौदसको सुबजी भक्तामरजी सुना करती है यह हमारा जगत प्रसिद्ध है। मगर हम बहुतसी बहिनें यह भी नहीं जानती है कि इनमें क्या लिखा है और यदि नियम से शास्त्र स्वाध्याय करें तथा सुनें तो हमारे आचार विचार श्रेष्ठ होसक्ते है। शीलवन्ती सीता अञ्जनाकी सी पदवी धारण हम कर सक्ती है। वे भी स्त्रियां हमें सरीखी थी। मगर शास्त्रज्ञान था इस सबब से धर्म में हर प्रकार से दृढ थी और यही कारण है कि वे मोक्ष प्राप्त करती और सन्सारमे उनका नाम विख्यात है।

अवश्य जानने योग्य है। सूरजी मकांमरजी का मैं निर्णय नहीं करती हूं मैं भी पात्र कारती हूं मगर उसके न्याय समझने की भी अति आवश्यकता है क्यों कि समझने में फल श्रेष्ठ और पूर्ण मिलता है। हमारा भाइयों व पिताओं से प्रार्थना है कि त्रियों को या अवश्य धर्म न्याय पढ़ावाय। विद्याभ्यास करावें। ज्ञान से लौकिक व पारमार्थिक सुख प्राप्त होता है। गृह में अज्ञानता के कारण जो कुछ भी त्रुटियां हैं वह शास्त्र ज्ञान द्वारा दूर हो सकती है। धर्म नाम आत्मा के रत्न शुद्ध करना। यह जीव कर्मों से पस लिप्त है जैसे, सोना—पत्थर या, तिल—तेल। इस जीव का केवल ज्ञान, क्षायादि जो कषाय उनकर आच्छादित है, इन दोषों को यथोक्त रीति से दूर करने पर, वह निर्मल चिदानन्द, ज्ञानमई शिवस्वरूपी आत्मा सूर्य्य समान प्रगट होजाता है।

२—स्त्रीयां गृह में अथवा वसतिका में रहकर, धर्म साधन कर सकती हैं। आज कल इस पंचम काल में आर्जिका कम दृष्टि पड़ता हैं, इस लिए आपन गृह में ही बहुत कुछ धर्म साधन हो सकता है। इस पुस्तक के पढ़ने से भी बहुत कुछ ज्ञान प्राप्त होगा। भगवती आराधना श्लोक ८२ में लिखा है कि स्त्रीयों के महाव्रत भी होसक्ते हैं।

२ स्त्रियों का महाव्रत।

१६ हस्त प्रमाण १ सफेद वस्त्र अल्प मोल, पग की एड़ी सू लेय मस्तक पर्यन्त सर्व अङ्ग के आच्छादन करि और मयूरपिच्छि का धारण करती ईर्या पथ करती, लज्जा है प्रधान जाके, सो एकांत मात्र में दृष्टि नहीं धारती, पर्यन्त ते वचनालाप नहीं करती, ग्राम नगर के अति नजीक हू नहा अति दूर हू नहा, ऐसी वसतिका में अन्य आर्यिकानि के संग में बसती एक बार बैठ मौन सहित

चाहिए। आहार शुद्धि का ज्ञान स्त्रियों को अवश्य चाहिए। सीने पिरोनेका ज्ञान, गृह व्यवस्थाका ज्ञान यह अवश्य चाहिए। कई विद्वानोंका मत ऐसा है कि पुरुष और स्त्रीकी शिक्षा एकसी होनी चाहिए। स्त्री पुरुष के हक्क समान हैं यह बात धर्म से सिद्ध होती है। देखो श्री आदिनाथ भगवान ने अपनी पुत्री ब्राह्मी और सुंदरी को अक्षरज्ञान का आरम्भ कर दिया उस वक्त उन्होंने जो उपदेश दिया उसका महत्व ऐसा है।

इदं वपुर्वयश्चेदं इदं शीलमनीदृशम्।
विद्यया चेद्विभूष्येत सफलं जन्मवामिदम्॥
विद्यावान् पुरुषो लोके सम्मतिं याति कोविदैः।
नारी च तद्वती धत्ते स्त्रीसृष्टेरग्रिमं पदम्॥

अर्थ—यह आपका शरीर वय और शील यदि विद्या से भूषित होजायगा तो आपका जन्म सफल होगा क्योंकि विद्वान पुरुष लोगों में विद्वानों से सन्मानको प्राप्त करते हैं, ऐसा ही जब विदुषी स्त्री सृष्टि में श्रेष्ठ पदको धारण करलेती है। प्यारे भाइयो! श्री आदिनाथ भगवान के उपदेश को अच्छी तरह देखो और उनी आदेश के माफिक अपनी पुत्रियों को विद्या पढाना चाहिए, पुरुष सृष्टि और स्त्री सृष्टि जुदी मानी गई है दोनों को पढाई का भी तय भी जुदा चाहिए अपने को स्त्रियों के लायक पाठ्य पुस्तकें भी अच्छी बनवानी चाहियें जिसमें स्त्रियों का धर्म अच्छी तरह बताया हो।

५—हे बहिनो! जो कुछ मुझ से अशुद्धि या अनुचित कहा गया हो उसे आप पंडिता क्षमा करें।

जिन सेविका—

अनारदेवी, धर्मपत्नी श्रीमान लाला द्वारकाप्रसाद जैन, C K

हाथरस निवासी व इस पुस्तक के प्रकाशक।

को शास्त्रदान करके उनको ज्ञानी बनावें। इस काल में इस से बढ़कर और कोई पुण्य कार्य नहीं। धनी धर्मात्माओं को ग्रंथ मुफ्त में बाँटकर अपने धन को सफल करना चाहिए।

९—किसी भी धर्म शास्त्रों व पुस्तकों के पत्र, थूक को नमी से, नहीं पलटने चाहिए। और विनय से रखना चाहिए।

१०— धर्म साधन व स्वाध्याय समय अधोअङ्ग नहीं खुजाना चाहिए।

११— किसी से वाद विवाद करने का उद्देश्य जैनियों को कदापि न करना चाहिए। प्रश्न पर मृदु वचन से समाधान करना व कर देना योग्य है।

१२—भारतवर्षीय दिगम्बर संस्थाओं से निवेदन है कि जो जो पुस्तकें उनके यहां से विना मूल्य वितरण हेतु छपीं हों तो एक २ प्रति मुझे अवश्य भेजने की कृपा करें।

१३—बहुतों का ख्याल है कि छपे ग्रंथ पुस्तकादि से अविनय होती है इस लिए हम उनको महणा नहीं करते सो वैसे भाइयों से नम्र प्रार्थना है कि—विनय करना, न करना, हमारा ही कर्तव्य है। लाभ नुकसान सवत्र विचारा जाता है और विचारणीय है। हमको छपे ग्रंथों की विनय हस्त लिखित ग्रंथों के माफिक करनी चाहिए। क्यों कि ज्ञानावर्णी कर्मों का आश्रव, अविनय से होता है। हस्त लिखित शास्त्रों में छपे ग्रंथों का निषेध हमारे देखने में आया नहीं।

१४—प्रगट हो कि २४ तीर्थंकर भगवान धर्म चलाने वाले होते हैं। उनके वर्ण इस प्रकार हैं—

आदिनाथ, अजितनाथ, संभवनाथ, अभिनंदनाथ, सुमित्रनाथ
१ २ ३ ४ ५
शीतलनाथ श्रेयांसनाथ विमलनाथ अनंतनाथ धर्मनाथ
१० ११ १३ १४ १५
शांतिनाथ कुन्थनाथ अरहनाथ मल्लनाथ नमिनाथ
१६ १७ १८ १९ २१
इन १६ तीर्थंकरों का सुवर्ण

महावीर
२४

पद्मप्रभु वासपूज्य
६ १२
} इन का लाल

सुपार्श्वनाथ पारसनाथ
७ २३
} " " हरित

चन्द्रप्रभु पुष्पदन्त
८ ९
} " " श्वेत

मुनिसुव्रतनाथ नेमनाथ
२० २२
} " " श्याम

यह कथन ध्यानीय है कि अर्हत भगवान के शरीर का वर्ण सुवर्ण, लाल, हरित, श्वेत और श्याम है तभी हमारे अजैन भाइयों को आपने कहते हुए सुना होगा, काले राम, पीले राम, हरे राम (गोरे)सफेद राम,लाल राम—विचारनीय बात है कि राम शब्द यहां श्री रामचन्द्रजी से मतलब नहीं है परंतु भगवान से। और श्री रामचंद्रजी से मतलब लिया जावे तो एक शरीर के इतने रङ्ग नहीं हो सकते इस लिए यह स्वयं सिद्ध हुआ कि "राम" भगवान से मतलब है श्री रामचन्द्र जी का श्वेत वर्ण था वे भी अर्हन्त भगवान होकर श्री मांगी तुङ्गी से सिद्ध हो गये हैं, देखो श्री पद्मपुराण (जैन रामायण) जैनी लोग उनको भी पूजा मंगना करते हैं।

आज श्री रामचन्द्रजी और रावण की लड़ाई को, ११ लाख ८७ हजार वर्ष व्यतीत हुऐ हैं।

१५—

मोक्ष ॐ रत्नत्रय(सम्यग्दर्शन,ज्ञान चारित्र)

देव गति

मनुष्य गति 卐 तिर्यंच गति

नरक गति

इस सांतिये से यह मतलब है कि धर्म साधन करते हुए रत्नत्रय द्वारा मोक्ष ग्रहण होता है उसी की नित्य यादगारी में पूजन के समय सांतिया काढा जाता है—चार गतियों में यह जीव किस तरह भ्रमण करता है सो जैन शास्त्रों से जानना।

१६—सम्पूर्ण तत्वों को जानने वाली तथा तीनों लोक के तिलक के समान अनंत श्री को प्राप्त होने वाले श्री सन्मति (महावीर या वर्द्धमान) जिनेन्द्र को मैं वंदना करता हूं। जो कि उज्वल उपदेश के देने वाले हैं, और मोह रूप तन्द्रा के नष्ट करने वाले हैं। भावार्थ श्री दो प्रकार की होती है। एक अंतरङ्ग दूसरी बाह्य। अनंतज्ञान अनंतदर्शन अनंतसुख अनंत वीर्य इस अनंत चतुष्टय रूप श्री को अंतरङ्ग श्री कहते हैं। और समवसरण, अष्ट * प्रातिहार्य आदि, बाह्य विभूति को बाह्य श्री कहते हैं। यह श्री तीन लोक को तिलक के समान हैं, क्यों

कि सर्वोत्कृष्ट है॥ दोनों श्री में अंतरंग श्री प्रधान है। अंतरंग श्री में केवल ज्ञान प्रधान है। इसी लिए कहा है कि वह समस्त तत्वों को, सम्पूर्ण तत्व और उसकी भूत भविष्यत् वर्तमान समस्त पर्यायों को जानने वाली है। इस श्री को श्री सन्मति (अंतिम तीर्थंकर श्री महावीर स्वामी) ने प्राप्त कर लिया था, वे सर्वज्ञ थे, इस लिए उनको वन्दना की है। वे वीर भगवान केवल, सर्वज्ञ ही नहीं है, हितोपदेशी भी हैं॥ उन्होंने जो जगज्जीवों को हितका—मोक्ष का—मार्ग बताया है, वह (हितोपदेश) उज्ज्वल है। उस में प्रत्यक्ष या परोक्ष किसी भी प्रमाण से बाधा नहीं आती। तथा वीर भगवान मोहरूप शत्रु के नष्ट करने वाले हैं। अर्थात वीतराग है। अतः सर्व ज्ञाता हितोपदेशकता वीतरागता इन तीन असाधारण गुणों को विराजकर हुए देव अन्तिम तीर्थंकर श्रीमहावीर स्वामी को जिनका कि वर्तमान में तीर्थ प्रवृत्त हो रहा है नमस्कार कर मङ्गलाचरण करते हैं।

इसी हेतु हम विचार करते हैं कि जहां तहां जो श्री इस्तैमाल की जाती है उसका उपर्युक्त अर्थ है—पत्रों में "सिद्धिश्री" का भावार्थ सिद्धों और श्री महावीर स्वामी से है।

नोट —*८ प्रातिहार्य

दोहा—तरु अशोक के निकट में, सिंहासन छविदार।
तीन छत्र शिरपर लसैं, भामडल पिछवार॥१॥
दिव्यध्वनि मुखतैं खिरै, पुष्प वृष्टि सुर होय।
ढारैं चौंसठि चमर यक्ष, बाजैं दुंदुभि जोय॥

१७—सूतक प्रमाण विचार।

पीढ़ी	दिन
पीढ़ी ३ तक	१२
चौथी पीढ़ी	१०
पांचवीं ,,	६
छठवीं ,,	४
सातवीं ,,	३
आठवीं ,,	१
नवमीं ,,	३ पहर
दशवीं ,,	स्नान मात्र

एक साल के बालक का तीन दिन।

साधु का सूतक नहीं लगता।

अपघातसे मरे उसके घर ६ महिना

गाय घोड़ा आदि घरमें जन्मे, मरे तो सूतक १ दिन।

बालक जन्मे उसके गृह १० दिन, प्रसूति स्थान को १ माह और गोत्रके मनुष्यों को ५ दिनका।

१८—वैर से वैर को शांति नहीं।

खम्मामि सव्व जीवाणं सव्वे जीवा खमंतु मे।
मित्ती मे सव्वभूदेसु वैरं मज्झं ण केण वि॥

प्रत्येक जीव व मनुष्यको किसी दूसरे से वैर भाव नहीं करना चाहिए इस से संसार दीर्घ होता है और यह वैर परस्पर बढ़ता जाता है यहां तक कि अनंत भवों में नहीं छूटता, एवं ऐसा करने से मोक्ष मार्ग पर जीव नहीं लगता इस लिए बुद्धिमान चतुर मनुष्य व जीवों किसी से वैर नहीं करते तथा वैर का निमित्त आजाने पर, सौ सूरतें से उसको टाल देते हैं।

इस शरीर में ५६८९९५८४ रोग भरे हैं जिस में नेत्र रोग सिर्फ ९६ हैं। इस लिए शक्ति प्रमाण हमेशा धर्म साधन करते रहो। तीर्थ यात्रादि धर्म सब तरुण अवस्था में अच्छे साधन होते हैं। न मालम यह शरीर हम से कब छूट जावे आज

फल नाना प्रकार के रोग व पद्मादि का झगड़ा घर फिरा करता है। पौरुष इन्द्रियां थकने पर यथायत नहीं हो सकता। शुरू से धर्म साधन करते हुए नाना प्रकार के भावों का यह जीव ज्ञायक हो जाता है। तो अंत समय समाधि मरण भले प्रकार कर सकता है। समाधि मरण इस जीव ने कभी नहीं किया। इस लिए भ्रमण कर रहा है। एक दफे भी समाधि मरण हो जावे तो, मोक्ष पंथ पर लग जावे—हमारे ऊपर किसी प्रकार का कष्ट दुख, बैर, इत्यादि में उपसर्ग हो, सब धैर्यता से सहो, प्रभु का स्मर्ण करो ईश्वर के सदृश भाव है। शिव, विष्णु ब्रह्म, सिद्ध, इत्यादि जो तीन लोक के शिखर पर विराजते हैं। लोक आगे लगा देने से शिव लोक विष्णु लोक, ब्रह्म लोक, सिद्ध लोक यह मोक्ष के नाम हो जाते हैं। अन्य स्थान व जीव कोई नहीं—जब धैर्यता से कष्ट, दुख बैर इत्यादि सहोगे, तो अंत में कोई वैसी भाव पैदा होगी जो हमारे अमूल्य होयेगी, मेरा यह कई बार का तजरुबा किया हुआ है। कोई चुगली करे या गालियां भी देवे तो धर्म ध्यान पूर्वक सहो शांत रहो। उस ही की आत्मा, जिसका खराब होयेगी उस ही के सर पर पाप (गुनाह) सवार होयेगा। प्रत्यक्ष प्रमाण है कि जो कोई अपना मुंह दूसरे की तरफ टेढ़ा करेगा, तो दर्पण में, उस ही का टेढ़ा दीखेगा। और लोकापवाद होगा और उसका दुःख फल वही भोगेगा। शांत धैर्य पूर्वक, सुनने वाले को कर्म निर्जरा होगी। शांतता, और गुण बढ़ेंगे, लोक प्रशंसनीय होगा यदि शांतता न धारण करोगे तो दोनों समान हो जावोगे। किसी कवि ने कहा है कि———

दुःख शोक जब जो आपड़े, सो धैर्य पूर्वक सब सहो।
होगी सफलता क्यों नहीं, कर्तव्य पथ पर दृढ़ रहो॥

१९—बहुबीज का स्वरूप।

गूदे की अपेक्षा बीज ज्यादा और एकदम गिरपड़े और बीज के, बीच में पुट (छिलका) न होवे और एक घरमें रहवे हों सो बहुबीजा जान लेना—(सूखे फलोंमें दोष नहीं)

बहुबीजे के फल ।

अफीम का डोडा, गोलों लाल मिरच, बिजोरा, पोस्त, धतूरा सत्यानासी, खरबूजा, पपीतो, इलायची हरी —

२०—जैन धर्म उद्योत करने के मुख्य उपायें ।

दान चार प्रकार में, शास्त्र दान प्रधान ।
अष्ट कर्म को नष्ट कर पावे मोक्ष निदान ॥
धर्म करत संसार सुख, धर्म करत निर्वान ।
धर्म पथ साधे बिना, नर तिर्यंच समान ॥

(अ) स्थानीय और भारतवर्षीय जैन अजैन समाजों में जैन धर्म की प्राचीनता प्रगट कर आत्म सुख का सच्चा उपाय बताना ।

(ब) सर्व प्रकार के ग्रन्थों का संग्रह कर स्थानीय व ग्रामादि समाज में स्वाध्याय प्रचार करना । तथा भारतवर्षीय जैन समाज में षटकर्म रूपी नियमावली प्रकाशित कर स्वाध्याय व धर्म प्रचारार्थ बिना मूल्य वितरण करना ।

(स) जैन समाजकी अशिक्षित स्त्रियों में विद्या प्रचारार्थ हिंदी पुस्तकें बिना मूल्य बांट कर आत्म हित पर लाना ।

(ड) अमूल्य जैन ग्रन्थ व पुस्तकें प्रकाश कर बिना मूल्य बांटना और मासिक पत्र को भारत वर्षीय जैन समाज को बिना मूल्य भेजना ।

(ई) बालकों के धर्म शिक्षार्थ पाठशालायें खुलवाना ।

२२—दो घड़ी (४८ मिनट) में ३७७३ स्वास होते हैं

२३—विचारने योग्य प्रश्न ।

(अ) इस प्रश्न पर रोज विचार करो कि मैं कौन हूं ?

(च) नर देह बड़ी कठिनता से प्राप्त होती है । इसे विषय भोगों में व्यर्थ मत खोओ। परोपकार एवं आत्म कल्याण में लगाओ।

(स) सब जीवों से मैत्री भाव रक्खो।

(ए) मैं ज्ञानमयी चैतन्य हूं।

(ई) देह मेरी नहीं, जड़ है।

(क) पर वस्तु (मात पिता स्त्री भ्राता पुत्र पुत्री इत्यादि कुटुम्बी जन, द्रव्य, महल, मकान, जमीन, शरीर जिसमें अपना चैतन्य रम रहा है, इत्यादि में आपा मत मानों। मानना दुखदाई है।

(ज) शुद्ध खान पान करना। सादा आहार, वस्त्र, चाल चलन ठीक रखना व कुसङ्गतियों से बचना मनुष्य का कर्त्तव्य है।

(इ) जीव मात्रकी रक्षा करो।

२४—प्रत्येक ग्राम नगर में यह अमृत रूपी धर्मोपदेश जैन अजैन भाइयों की सभा कर प्रति मास सुनाना चाहिये ।

२५—यह पुस्तक प्रत्येक जैन मंदिर, उपदेशक, सभायें धर्म प्रेमी, सरस्वती (जिनवाणी) भंडार में रखना चाहिये।

२६—अहिंसा परमो धर्म । यतो धर्म स्ततो जय। धर्मात्माओं के बिना, धर्म अन्यत्र कहीं नहीं पाया जा सकता है ।

२७—गृहस्थ के कर्तव्य ।

१—सर्वज्ञ वीतराग देव की पूजा निर्ग्रंथ गुरु की उपासना स्वाध्याय संयम । तप और दान नित्य प्रति करना ।

२—मधु मांस और मद्य के सर्वथा त्याग और हिंसा झूठ चोरी कुशील और परिग्रह का एक देश त्याग करना।

३—मिथ्यात्व, सप्तव्यसन, अन्याय, अभक्ष्यका, सर्वथा त्याग कर पंच अणुव्रतोंके पालनमें जैनियोको तत्पर रहकर नरभव सफल करना चाहिये।

जैनियों के चिन्ह।

१—जिन दर्शन करना, जल छानकर पीना और रात्रि भोजन त्याग करना।

२६—पढ़ने योग्य शास्त्र।

वीतराग सर्वज्ञ कथित जो। तत्व अतत्व प्रकाशक हो।
रहित विरोध पूर्वापर हो। मिथ्यामत का नाशक हो॥ १॥
नहीं उलथ सके परवादी। धर्म अहिंसा भासक हो।
आत्मोन्नति का मार्ग विधायक शास्त्र हमारा शासक हो॥ २॥

३०—उद्देश।

हर एक के साथ भाईयाना वर्ताव करते हुए मनुष्य मात्रकी सेवा कर जैन धर्म का प्रचार करना।

नोट—"जिन" सन्सकृत म जीतने वाले को कहते है यानी जिसने क्षुधादि १८ दोष जीत लिये वह जिनेन्द्र सर्वज्ञ हितोपदेशक, का कथित धर्मोपदेश, उसको "जैन धर्म कहते हैं।

३१—नीति वाक्य।

Be just & fear not "मुनसिफ हो डरो मत"।
Be good & do good "नेकी करो नेक रहो"।
Plain living & high thinking "सरल आचार उच्च विचार"।
Love your King & do your duty "अपने राजा बादशाह से मुहोब्बत करो और अपना फर्ज अदा करो"।

३२—कोई प्रश्न करे कि सम्यग्दृष्टी अथवा सम्यक्ती की क्या पहिचान? उसका समाधान प० भूदरदासजी ने चर्चा

समाधान ग्रन्थ चर्चा न० १७ में इस प्रकार किया है "यश तिलक नाम काव्य विषै पुरुष के चार वाह्य लक्षण कहे हैं। चार ही सम्यक्त के कहे हैं—यानी स्त्रीजन के सभोग करि। बेटा बेटी कें उपजावने करि। विषी विषै धीर्य भाव सों। आरब्ध कार्य के निरवाह से। इन चार चिन्ह करि पुरुषकी अतीन्द्रिय पुरुष शक्ति जानी जावै है तस ही शान्त भाव * संवेग भाव * दया भाव * आस्तिक्य भाव * इन चारों अव्यभिचारी भावनसों सम्यक्त रत्न जाना जावैहै—यानी

१—क्रोधादि रहित सम भाव को शान्त भाव कहिये।

२—कोमलता युक्त परिणाम को दया भाव कहिये।

३—धर्म, धर्म के फल विषै प्रीति होय तथा देह भोग सों उदासीनता होय जिसे संवेग भाव कहिये।

४—आप्तागम पदार्थ विषै नास्ति बुद्धि न होय जिसे आस्तिक भाव कहिये।

यह चारों भाव कभी विभचरें नहीं। विकार रूप न होवें यह सम्यकदृष्टी का बाह्य लक्षण है।

नाट—जिसने सम्यक्त ग्रहण कर लिया उसके हाथ में चिन्तामणि है। घरमें कामधेनु जिसके घरमें कल्पवृक्ष है उसके अन्य क्या प्रार्थना की आवश्यकता है। कल्पवृक्ष कामधेनु चिंता मणि तो कहने मात्र है। सम्यक्त्व ही कल्पवृक्ष कामधेनु चिंतामणि है यह जानना (परमात्म प्रकाश श्लोक १४१ से उद्धृत)

३३—उपदेश।

१—संसार में अनादि से प्रचलित मिथ्यामतों के जाल से बचने के लिये पहले अपने जैन शास्त्रों को पढ़ो और उनका मनन करो।

२—स्वाध्याय करने के नियम धारण करो। जैन धर्म प्रचार करने का यही एक उपाय है।

३—अपने जीवके समान समस्त जीवों को जानो।

४—दूसरों के दुखों को दूर करने के लिये हर तरह से तय्यार रहो।

५—जैन धर्म का उपदेश संसार के समस्त जीवों के कल्याण के लिये है। यह किसी एक समुदाय विशेष का ही धर्म नहीं है। इसलिये इसका प्रचार जगत भरमें करदो।

६—अपने से कोई बात शास्त्र विरुद्ध भूलसे कही जाय तो उस भूल को हर समय स्वीकार करलो। झूठा पक्ष मत करो।

७—प्रत्येक नगर में जैन सभा, जैन पाठशाला और जैन पुस्तकालय की स्थापना करदो। और अपने नवयुवक जैन अजैन भाइयों को धर्मानुराग कराते रहो—

३४—जैन धर्म के सिद्धान्त।

(१) जैन धर्म आत्मा का निज स्वभाव है।

(२) संसारी आत्माही मिथ्यात्व रागद्वेषादि भावों का नाशकर अपनी सम्पूर्ण कर्मरूपी, माया से अलिप्त हो परमात्म अवस्था को प्राप्त कर लोक शिखर पर अनीतकाल के शुद्धात्माओं की अवगाहना में ही एक क्षेत्रावगाह रूप स्थित हो अनन्त काल तक अनन्त सुखमें मग्न रहा करता है।

(३) पूर्वोक्त परमात्म पद के अविनाशी सुख में प्राप्त होने का अहिंसामयी उपदेश जैनधर्म से ही मिलता है और यह अहिंसा, राग द्वेषादिक भावों से प्राणों का घात न करना ही है।

(४) संसार में अहिंसामयी वीतराग विज्ञानता ही सार भूतहै अत: उसको प्राप्त करलेके लिये वीतराग, सर्वज्ञ और हितोप देशी की ही उपासना करना योग्य है।

(५) जीव, पुद्गल, धर्म, अधर्म, आकाश और काल इन छ द्रव्यों मय जगत अनादि सिद्ध है।

(६) जीवात्मा से नितान्त भिन्न कोई एक परमात्मा नहीं है।

३७—दीर्घ चेतावनी ।

पुद्गी वैभव बढ़ाने के लिए राग द्वेष क्रोधादि द्वारा अन्याय विपरीत आचरण हमें न करना चाहिए। हम जिन जिन के आधीन हैं उनकी न्याय पूर्वक फर्मावरदारी में रहें। अथवा जो जो हमारे आधीन हैं उनपर दयाभाव रखना उचित है।

३८ अ—हमारा अंतःकरणसे भावना व आशीर्वाद है कि श्रीमान महोदय महामान्य सम्राट पं चम जार्ज, वृटिश सरकार का समस्त पृथ्वी पर अटल राज्य हो, कि जिन के राज्य में हम पूर्ण स्वतंत्रता पूर्वक धर्म साधन व धर्मोन्नति करते हैं। व श्रीमान म० हिज मायजट, हिज एक्सेलेन्सी गवर्नर जनरल हिंद, हिज एक्सेलेन्सी गवरनर, संयुक्त प्रांत United Province और श्रीमान महोदय कलक्टर साहब बहादुर जिले *अलीगढ़ न्यायाधीश, मजिस्ट्रेट साहब व तहसीलदारजी साहब * हाथरस को अनेक कोटिश हार्दिक धन्यवाद है कि वे हम दिगम्बर जैनियों की हर तरह से हिफाजत दूर रेख करते हैं। तथा धर्म साधन में हर पूर्वक मदद देते हैं।

नोट—*जो वक्ता जिस स्थान का हो, वह वहाँ के स्थानों को पढ़ें।

स—अब मैं अ खिर कुछ मङ्गल भजन करके अपने स्थान पर प्रस्थान होता हूं। जो कुछ भी प्रमाद व अज्ञानता वश, मुझमें गलतियां व अशुद्धी हुई हों, उनके लिए जिनवाणी से क्षमा प्रार्थी हूं। तथा जो २ पण्डित चतुर विद्वजन हों, मुझ मंद बुद्धि पर क्षमा भाव कर, सुधार करेंगे। मैंने तो, केवल, भक्ति व धर्म साधन धर्म यह धर्मोपदेश लिखा है यद्यपि मैं असमर्थ हूं जैसे बालक चन्द्रमा को पकड़ना चाहे।

३९—मेरी भावना व निवेदन (नमः सिद्धेभ्य)

सब प्राणी ज्ञान, शक्ति प्रमाण यथा धर्म शास्त्रोक्त रीति पर धारण करो। ज्ञानी बनो ज्ञान वान होने का निमित्त कारन मनुष्य पर्याय को ही है इसलिये कोई पुरुष व स्त्री स्वाध्याय

और नहीं रहना, नित्य करना। यम नेम अवश्य करना॥ श्रावक, श्राविका वृत ग्रहण करें। यदि शक्ति और पौरुष ठीक हो तो शास्त्रों को मनन कर द्रव्य क्षेत्र, काल भाव अनुकूल हो, तो वृह्मचर्य त्याग, मानें वृत ग्रहण कर अपना और दूसरों का कल्याण कारिये वरना ग्रहस्थावस्था में ही जो कुछ बने करते रहो। अपने और दूसरों को पहिचाना। सब जीवात्मा आत्मशक्ति अपेक्षा समान हैं, तिल मात्र भी फर्क नहीं है। कर्मावशा भिन्नता है।

नोट—स्वाध्याय करने के पाच भेद हैं, पढना, सुनना, उपदेश देना, मनन करना, प्रश्न करना, सो जिस जीव को जैसी शक्ति हो, ग्रहण करें। वार २ शास्त्र को खुद पढने व सुनने से यह जीव पूर्ण अवस्था को प्राप्त होता है।

४०— आत्मज्ञान माला

बागा में तू न जारे चेतन, घट ही में फुलवार हो ॥टेक॥

ज्ञान गुलाब चरित्र चमल्ली, विना वेल सुविचार हो ॥
चरचा चम्पा महक रहो है, मरवो मोह निवार हो॥ १ ॥
रायबेल सिर सरदा सोहे, शील शिरोमण धार हो।
काई कुमत जहाँ तहा विनसत, देखत सुमत निवारहो॥२॥
समकित माली विवेक बेल ज्यों, आतम रोप निहार हो।
क्यारी क्षमा जहा तहा सोहे, सींचत अमृत धारहो॥३॥
वहु विधि कर यह वृक्ष फलो है, दशदा फल लागी डारहो।
धन्य पुरुष जिन बाग निहारो, अब चल देख वहार हो॥४॥

४१—भाई से भाई की प्रीति । भजन ।

हुक्म हमको पिताजी का बजाना ही मुनासिब है ।
अवध को छोड़कर जङ्गल में जाना ही मुनासिब है ॥टेक॥
नहीं है रोष का मौका सुनो लछमन मेरे भाई ।
मात कैकई के आगे सर झुकाना ही मुनासिब है ॥ १ ॥
अवध के तख्त पर अबतो नहीं बैठूगा मैं हरगिज ।
ताज भैया, भरत के सर सजाना ही मुनासिब है ॥२॥
धनुष तुम ने जो चिल्ले पर चढ़ाया है बिना समझे ॥
धनुष को चाप से फौरन हटाना ही मुनासिब है ॥ ३ ॥
राज के वास्ते, भाई न भाई से, लड़ेंगे हम ।
वचन राजा का सब हमको निभाना ही मुनासिब है ॥४॥
हुआ भारत सभी गारत पड़ी जो फूट आपस में ।
कहे न्यामत फूट को अब मिटाना ही मुनासिब है ॥ ५ ॥
श्री जिनेन्द्र पद समझतें, होई सब सुख सच ।
करम भरम संबंध का, कारन रहे न रंच ॥

४२—श्लोक (अंतिम प्रार्थना)

धन्येयं पृथिवी तथैव जनता धन्यादय ग्रामोऽप्ययं ,
धन्या वत्सर मास पक्ष दिवसा धन्यः क्षणोऽयं च न ।
यत्रास्माभिरसौ परस्परमभिप्रीत्या च सौहार्दतः ।
सहृत्वा स्थितिमाश्रयम्य परमो धर्मो निज प्रस्तुत ॥

अर्थ—धन्य है यह पृथ्वी, धन्य है यह मंडल, धन्य है य
देश, धन्य है यह वर्ष, धन्य है मास, धन्य है यह पक्ष, धन्य
यह दिन, धन्य है यह क्षण जिस में अपने सब भाई एकत्रि
होकर परस्पर प्रेम पूर्वक धार्मिक सम्भाषण करते हैं ।

बोलो—जैन धर्म की जय —

जिन सेवक—द्वारकाप्रसाद जैन C h (गोत्र कौलभंडारी
जैसवाल—वंशीय—इक्ष्वाकुवंश हाथरस निवासी,
सभापति श्री दि० जैन धर्म प्रभावनी सभा व पो० मास्टर सांभर लै
(हैड ऑफिस) राजपूताना (मई १९२५ ई०)

औषधिदान।

श्रीमती स्वर्गीय भगवान देवी जैन पारमार्थिक औषधालय (स्थापित वीर सम्वत २४५१) हाथरस यू० पी० के।

१ उद्देश्य—शुद्ध औषधी और औषधिदान का सर्वत्र प्रचार कर रोगी दुखी जनो की पीड़ा दूर करना।

२ नियम—धर्म रहे अरु धन बचे, रोग समूल नशाय।
यह सुख शीघ्र उठाइये शुद्ध औषधी खाय॥
शरीर की निरोगता पुरुषार्थ साधन सेतु है।
कंचन सुगंधित देह का निर्माण औषधि हेतु है॥
दान औषधि पुण्य यश कर यश रूप धन प्राण है।
जगमें शिरोमणि नर वही जो देत जीवन दान है॥
धर्मार्थ खोला—औषधालय सभ्य वृद्धी दीजिए॥
शुभ द्रव्यदेकर आप अपना यश उपार्जन कीजिए॥
जो वीर दानी दानसे इसको समुन्नति देइ गें।
वे पद व फोटो से विभूषित होइ गें पुनि होइ गे॥

३—सर्व औषधि व नुस्खे मुफ्त। वैद्यजी बिनाफीस असमर्थ रोगी को देखते हैं।

४—स्थापित ता० २८ मई १९२५ से ३१ जनवरी १९२६ तक २५२० रोगियों को दवाएँ दीगई जिनमें से २३७७ को आराम हुआ।

५—आर्थिक मासिक सहायता की छपी रसीद दी जाती है। विवरण प्रतिमास जैन समाचार पत्रों में व वार्षिक रिपोर्ट में छपकर प्रकाशित होता है।

६—जो निम्न लिखित सहायता देंगे उन्हें नीचे लिखे पदों से विभूषित कर उन के फोटो औषधालय में सुशोभित किए जावेंगे और प्राप्त द्रव्य औषधालय के कार्य में लगाया जावेगा।

मूल संस्थापक	१ हो	२५०००)	जैन जाति रत्न
संस्थापक	५ हो	१००००)	जैन जाति वीर
मुख्य संरक्षक	१ हो	६०००)	जैन बंधु
संरक्षक	१० हो	८०००)	जैन हितैषी
मुख्य सहायक	२० हो	१०००)	धर्म[illegible]

४१–भाई से भाई की प्रीति । भजन ।

हुक्म हमको पिताजी का बजाना ही मुनासिब है ।
वचन का छोड़कर जङ्गल म जाना ही मुनासिब है ॥टेक॥
नहीं है रोश का मौका सुनो लछमन मेर भाई ।
मात कैकई के आगे सर झुकाना ही मुनासिब है ॥ १ ॥
अवध के तख्त पर अबतो नहीं बैठूंगा मैं हरगिज ।
ताज मेरा, भरत के सर सजाना ही मुनासिब है ॥२॥
धनुष तुम ने जो चिल्ला पर चढ़ाया है बिना समझे ॥
धनुष को चाप से वरदा हटाना ही मुनासिब है ॥ ३ ॥
राज के वास्ते, भाइ न भाई से, लड़ेंगे हम ।
वचन दादा का सब हमको निभाना ही मुनासिब है ॥४॥
हुआ भारत सभी गारत पड़ी जो फूट आपस में ।
कहे बामत फूट को अब मिटाना ही मुनासिब है ॥ ५ ॥
श्री जिनेंद्र पद भजतें, होद सब सुख सच ।
करम भरम संबंध का, कारन रहे न रंच ॥

४२–श्लोक (अंतिम प्रार्थना)

धन्येयं पृथिवी तथैव जनता धन्याश्च देशोऽप्ययं,
धन्या वत्सर मास पक्षदिवसा धन्यः क्षणोऽयं च न ।
यत्रास्माभिरमी परस्परमभिप्रोत्या च संमिलन् ।
सद्धर्मा [illegible] परतो धर्मो जिन प्रस्तुत ॥

अर्थ—धन्य है यह पृथ्वी, धन्य है यह मंडल, धन्य है यह देश, धन्य है यह वर्ष, धन्य है मास, धन्य है वह पक्ष, धन्य है वह दिन, धन्य है वह क्षण जिस में अपने सब भाई एकत्रित होकर परस्पर प्रेम पूर्वक धार्मिक प्रस्ताव करते हैं ।

बोलो-जैन धर्म की जय —

जिन सेवक—द्वारकाप्रसाद जैन C K (गोत्र कोलभंडारी)

जैसवाल—क्षत्रीय—इक्ष्वाकुवंश [illegible] निवासी,
सभापति श्री दि० जैन धर्म प्रभावनी सभा [illegible] सांभर लेक
(हैड ऑफिस) राजपूताना ([illegible] ई०)